RNI No. : UPHIN-2009/29369

डाक पंजीकरण : KANPUR HO/002/2022-24
प्रधान डाकघर कानपुर-डाक प्रेषण दिनांक 29/30

वार्षिक सदस्यता शुल्क 100/-

द्रविड़ भारत

www.dbindia.org.in

सामाजिक परिवर्तन का मासिक पत्र

सितम्बर-2022 | वर्ष - 14 | अंक : 08 | मूल्य : 5/-

गौतम बुद्ध

बाबा साहेब डा० अम्बेडकर

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

सम्पादकीय

RNI No. : UPHIN-2009/29369

संपादक : उमेश्वरी देवी, मो.: 9005204074
संरक्षक मण्डल : मा. रामदीन अहिरवार (महोबा), मा. राम अवतार चौधरी (अधिशासी अभियन्ता), मा. छविलाल वर्मा (चरखारी), मा. हरिनाथ राम (दिल्ली), मनीष कुमार मो. 9415053621
राज्य ब्यूरो प्रमुख उत्तर प्रदेश :
सुनील कुमार, ढेलवा, गाजीपुर (उ.प्र.),
मो.: 9935363730, 9170836363
योगेन्द्र कुमार (ब्यूरो चीफ चित्रकूट मण्डल)
मो.: 8299162841
क्षेत्रीय सम्पादकीय कार्यालय :
40/69, डी-5, श्यामलाल का हाता, परेड, कानपुर (उ.प्र.), मो. : 8756157631
ब्यूरो प्रमुख कानपुर मण्डल :
पुष्पेन्द्र गौतम, मल्हौसी, औरैया, उ.प्र.
मो.: 9456207206
हरियाणा राज्य :
डा. रमेश रंगा, ग्राम-सराय, औरंगाबाद, पो.-बहादुरगढ़,जिला-झज्जर (हरियाणा),09416347052
कानूनी सलाहकार : एड. रामप्रकाश अहिरवार, एड. यू.के. यादव, मोती लाल वर्मा, एड. विजय बहादुर सिंह राजपूत, एड. रमाकान्त धुरिया, सुशील कुमार, कानपुर
मध्य प्रदेश राज्य : पुष्पेन्द्र कुमार
कार्यालय : ग्रा. व पो.-रामटौरिया, जिला-छतरपुर
छत्तीसगढ़ राज्य :
दिलीप कुमार कोसले, मो. : 09424168170
दिल्ली प्रदेश : C/o अनिल कुमार कनौजिया C-260, हर्ष विहार, हरिनगर एक्सटेंशन पार्ट-III, बदरपुर, नई दिल्ली-44, मो. : 09540552317
राजस्थान राज्य : रघुनाथ बौद्ध, श्याम रघु फुट वियर, दुकान नं.-1, गणेश मार्केट, पुलिस चौकी के सामने, अलवर, जिला-अलवर-301001,
मो. : 09887512360, 0144-3201516
चिरंजीलाल बैरवा (व्यावस्थापक) मेहरा आदर्श विद्या मन्दिर, भीम नगर कालोनी, राज भट्टा, दिल्ली रोड, अलवर, जिला-अलवर, मो.-09829855349
बाबूलाल बौद्ध, अलवर, मो.-08058198233
संपादकीय/विज्ञापन प्रसार/पंजीकृत कार्यालय :
ग्रा व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला-महोबा (उ.प्र.)
मो. : 9005204074, 8756157631
E-mail : dravinbharat1@gmail.com
प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी
उमेश्वरी देवी द्वारा ग्रा. व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला महोबा से प्रकाशित व श्रेय ऑफसेट प्रा. लि., 109/406, नेहरू नगर, कानपुर, 84/1, बी, फजलगंज, कानपुर से मुद्रित

प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित लेख, सामग्री, में संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। इसमें किसी भी प्रकार का दावा या विचार मान्य नहीं होगा। लेख के विवादित होने पर लेखक ही उत्तरदायी होगा समस्त विवादों का निपटारा महोबा न्यायालय में होगा पत्रिका का संपादन एवं संचालन पूर्णतयः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक है।

मिशन को बढ़ाने के लिए सहयोग करें -
भारतीय स्टेट बैंक, शाखा-पी.पी.एन. मार्केट, कानपुर
खाता सं.-33496621020•IFSC CODE-SBIN0001784

धर्म मनुष्य के लिए है ..

मैं आप लोगों को यह स्पष्ट रूप से कह देना चाहूंगा कि मनुष्य धर्म के लिए नहीं है, बल्कि धर्म मनुष्य के लिए है। संसार में मनुष्य से बढ़कर और कोई चीज नहीं है। धर्म एक साधन मात्र है, जिसे बदल दिया जा सकता है। फेंक दिया जा सकता है।

यदि आपको इंसानियत से मोहब्बत हो तो धर्मांतर करो। हिन्दू धर्म का त्याग करो। तमाम दलित अछूतों की, सदियों से गुलाम रखे गये वर्ग की मुक्ति के लिए एकता, संगठन करना हो तो धर्मांतर करो। समता प्राप्त करना हो तो धर्मान्तर करो। आजादी प्राप्त करना हो तो धर्मान्तर करो। अपने जीवन की सफलता चाहते हो तो धर्मान्तर करो। मानवी सुख चाहते हो तो धर्मान्तर करो, हिन्दू धर्म को त्याग से ही तमाम दलित, पद दलित, अछूत, शोषित, पीड़ित वर्ग का वास्तविक हित है, यह मेरा स्पष्ट मत बन चुका है।

जो धर्म हमारी मनुष्यता को कोई कीमत नहीं देना चाहता है उस धर्म में हम क्यों रहे? जो धर्म आप लोगों को मंदिर में जाने से रोकता है, उस धर्म में आप क्यों रहते हो? जिस मंदिर का भगवान आपके स्पर्श से ही अपवित्र होता है, उस भगवान को आप क्यों पूजते हो? जो धर्म तुमको पीने का पानी तक मिलने नहीं देता, उस धर्म में क्यों रहते हो। जो धर्म आपके नौकरी पेशे में अटकले पैदा करता है, उस धर्म में आप क्यों रहते हो? जिस धर्म में इन्सान के साथ रहने की मनाई है, वह धर्म, धर्म नहीं बल्कि इन्सानियत पर धब्बा है जिस धर्म में मनुष्य की मनुष्यता को पहचाना अधर्म माना जाता है वह धर्म नहीं बल्कि महारोग है जिस धर्म में जानवरों का स्पर्श चल सकता है किन्तु मनुष्य को मनुष्य का स्पर्श नहीं चलता वह धर्म नहीं बल्कि भानुमती का पिटारा है। जो धर्म नहीं बल्कि मनुष्य के पुरूषार्थ का विडंबन है जो धर्म यह शिक्षा देता है कि अशिक्षितों अनपढ़ रहों, गरीबों गरीब रहों, निर्धनों भीख मांगों, वह धर्म नहीं कैदखाना है।

मैंने धर्मांतर के सम्बन्ध में जितने प्रश्न उठाये जा सकते हैं, उन सभी प्रश्नों की चर्चा करने का प्रयत्न किया है। हो सकता है कि इन प्रश्न पर मैं विस्तार से कुछ बोल गया हूं, चूंकि मैंने इस विषय पर गहरा इसे सोचने का पहले से ही तय करके रखा था धर्मान्तर के संबंध में विरोधियों ने जो प्रश्न उपस्थित किये हैं, उन्हें उत्तर देना जरूरी था। धर्मांतर की जो घोषणा की गयी है, उसकी सार्थकता जब तक किसी के समझ में न आये तब तक कोई भी धर्मांतर न करे, यह मेरा स्पष्ट मत है। किसी के भी मन में किसी भी प्रकार की शंका न हो और न तो किसी भी प्रकार का संदेह रहे, इसलिए इस प्रश्न पर विस्तार से सोचा गया है। मेरे विचार किस हद तक आपकी समझ में आयेंगे यह मैं नहीं कह सकता किन्तु आप लोग इस पर गहराई से सोचेंगे, इसकी मुझे पूरी उम्मीद है। लोगों को जो बात अच्छी लगती है वही बोलना और लोकप्रियता प्राप्त करना, यह बात किसी चालबाज आदमी को ही शोभा देती है किन्तु किसी सही जन नेता को अशोभनीय है, यह मेरा स्पष्ट मत है। जनता का हित और अहित किसमें है, यह उनको समझाना मेरा, कर्तव्य है। फिर शायद यह आप लोगों को पसंद भी न आये, तब भी यह आपको बताना मेरा कर्तव्य है मैने मेरा कर्तव्य किया है, अब इस प्रश्नपर निर्णय लेना आपका फर्ज है।

मैंने धर्मान्तर के प्रश्न के जान बुझकर दो भाग किये हैं। इसमें एक हैं हिन्दू धर्म का त्याग करेंगे या हिन्दू धर्म में ही रहेंगे और दूसरा है, हिन्दू धर्म का त्याग करने पर किस धर्म का स्वीकार करेंगे, यह नये धर्म का निर्माण करेंगे। मुझे आज केवल प्रथम प्रश्न पर ही आपके निर्णयको जान लेना है जब तक हम प्रथम प्रश्न पर ही अपना निर्णय लेते तब एक दूसरे प्रश्न की चर्चा करना या निर्णय लेना फिजूल समझते हैं इसलिए प्रथम प्रश्न पर ही सोचना है। इसके बाद दूसरा अवसर इस प्रश्न पर सोचने के लिए आपको मिलने वाला नहीं है। आज की इस सभा में आप लोग जो निर्णय लेंगे उसी के अनुसार मैं अगला कार्य तय कर सकता हूँ। यदि आप लोगों ने धर्मान्तर के विरोध में निर्णय लिया, प्रश्न खलास। मुझे अपने लिए जो कुछ करना है, वह मैं अवश्य करूँगा। यदि आप लोगों ने धर्मांतर के पक्ष में निर्णय लिया तब तो आपको यह भी आश्वासन देना होगा कि सब लोग संघठित रूप में ही धर्मांतर करेंगे। धर्मांतर का निश्चय होने पर हर कोई मन चाहे उस धर्म में जाकर, इस तरह से अपनी एकता को भंग करना चाहता हो तो, मैं आपके इस धर्मान्तर के कार्य में सम्मिलित नहीं होऊंगा। हमे लगता है कि आप सब लोग हमारे साथ रहेंगे। हम जिस धर्म में जायेंगे उस धर्म में आप सबकी उन्नति के लिए, जो कुछ भी मेहनत और प्रयत्न करना पड़ेगा उसके लिए मेरी पूरी तैयारी है। किन्तु मैं कहता हूं इसलिए आप लोग धर्मान्तर करें, यह गलत है यदि आपकी बुद्धि यह सब करने की प्रेरणा दे, तब तो करो, मेरे साथ न आने का निर्णय आप लोगों ने लिया, तब भी मुझे दुःख होने वाला नहीं है बल्कि एक तरह से मेरी उतनी जिम्मेदारी कम हो जाएगी। यह तमाम दलित वर्ग की मुक्ति का प्रश्न है यह हमारे निर्वाणी का अवसर है आप लोग आपके भावी पीढी की भवितव्यता को जिस प्रकार से तय करेंगे उस पर निर्भर है, यदि आप लोगों ने आज स्वतंत्र होने का निश्चय किया, तब तो आपकी भावी पीढी भी स्वतंत्र होगी। आपने आज गुलाम रहने का निश्चय किया तब तो आपकी भावी पीढी भी गुलाम ही रहेगी। इसलिए इस प्रश्न पर आज सोचना आपकी महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है।

जो भी मुझे कहना आवश्यक था, वह कह दिया है सिद्धार्थ गौतम 'बुद्ध' के जीवन से सम्बन्धित एक घटना मुझे याद आती है। घटना बुद्ध के महापरिनिर्वाण के पहले की है बुद्ध के अनुयायी आनन्द जब उनके पास जाते है और कहते हैं कि आप अपने महापरिनिर्वाण के पहले संघ को कुछ मार्गदर्शन करें। तब बुद्ध आनन्द से कहते हैं, "आनन्द! संघ को मुझसे क्या चाहिए? जो कुछ मैंने जाना था वह संघ के सामने रख दिया है। बुद्ध रहस्यवादी नहीं है आनंद! अपने अपने दीप आप बनो। स्वयं प्रकाशित बनो। खुद पर भरोसा रखो। स्वयं की सरण में जाओ। सच्चाई पर अटल हो।" मैं बुद्ध के इन वचनों की याद दिलाकर अंत में यही कहना चाहता हूँ कि, "आप अपना आधार आप बनो। अपनी बुद्धि को सरण जाओ। अन्य किसी के बहकावे में मत जाओ। सत्य के आधार पर ही चलो। सत्य को ही सरण जाओ" बुद्ध का यह मार्गदर्शन आप सबको प्रेरक सिद्ध होगा और यदि आप लोगों ने बुद्ध के इन वचनों को ध्यान में रखा, तो मुझे इस बात का पूरा यकिन है कि आप लोग जो भी निश्चय करेंगें, वह गलत नहीं होगा।

साभार :
दलितों को धर्मान्तरण की आवश्यकता क्यों?
पृ.सं. 53 से 56 तक।
डा० बी. आर. अम्बेडकर
अनु० डा० विमल कीर्ति

आर्यों के विरुद्ध कार्य

इस बात पर काफी विचार कर चुके हैं कि किस प्रकार पाश्चात्य विद्वानों द्वारा आर्य जाति के संबंध में प्रतिपादित सिद्धांत कितने बेबुनियादी हैं और ब्राह्मणों ने उनको सहर्ष स्वीकार कर लिया। फिर भी इस सिद्धांत का लोगों पर इतना गहरा प्रभाव है कि इसके विरोध में कुछ भी कहना उन्हें पसंद नहीं होगा। उन्हें समूल नष्ट कर देना चाहिए। इस स्थिति में पाश्चात्य सिद्धांत के खोखलेपन का विश्लेषण आवश्यक है।

आर्यों के बाहर से आने और दास दस्यु जातियों को पराजित करने के सिद्धांत का समर्थन करने वाले ऋग्वेद के निम्नांकित मंत्रों को अनदेखा करते हैं। इन मंत्रों का निर्णायक महत्व है। आर्यों के भारत में बाहर से आने और स्थानीय निवासियों को पराजित करने के सिद्धांत को इन मंत्रों के संदर्भ के बिना स्वीकार करना अनुचित होगा। मैं इन मंत्रों को प्रस्तुत करता हूँ।

1. ऋग्वेद (5–33.3)–''हे इन्द्र तूने हमारे दोनों विरोधियों दासों और आर्यों को मार डाला''।
2. ऋग्वेद (6–60.3)–''धर्म और न्याय के रक्षक इन्द्र और अग्नि हमें दुख पहुंचाने वाले दासों और दस्युओं का दमन करें।''
3. ऋग्वेद (7–81.1)–''इन्द्र और वरूण ने सुदास के शत्रु दास और आर्यों का हनन किया और सुदास की रक्षा की।''
4. ऋग्वेद (8–24.27)–''हे इन्द्र, तुमने राक्षसों और सिंधु के तटवर्ती क्षेत्रों में निवास करने वाले आर्यों से हमारी रक्षा की है, अब तुम दासों को भी शस्त्रहीन बनाओ।''
5. ऋग्वेद (10–38.3)–''हे परम उपासनीय इन्द्र, दास और आर्य विधर्मी हैं और हमारे शत्रु हैं। उनका दमन करने के लिए हमें अपना आर्शीवाद दो। तुम्हारी सहायता से हम उन्हें मार डालेंगे।''
6. ऋग्वेद (10–86.19)–''हे मामेयु, अपने आराधकों को शक्ति दो। तुम्हारी सहायता से हम अपने शत्रु आर्यों और दासों का विनाश करेंगे।''

इन मंत्रों को पढ़ कर ठंडे दिमाग से सोचने पर पाश्चात्य सिद्धांत की वास्तविकता प्रकट की जाएगी। यदि इन मंत्रों के सृष्टा आर्य थे तो इन मंत्रों के साक्ष्य पाश्चात्य मत को आधारहीन बनाते हैं। साथ ही यह स्पष्ट होता है कि आर्यों की दो जन श्रेणियां थी जो अलग अलग थी तथा एक दूसरे से विद्धेष रखती थी। दो आर्य जातियों के अस्तित्व की बात कपोल कल्पित नहीं है। यथार्थ है। इसके पक्ष में अनेक साक्ष्य भी उपलब्ध हैं।

II

पहला साक्ष्य तो विभिन्न वेदों के पवित्र स्वरूप की मान्यता के बारे में भेदभाव का होना है। वेदों के विद्वान जानते हैं कि वेद केवल दो हैं :– ऋग्वेद और अथर्ववेद। सामवेद और यजुर्वेद तो ऋग्वेद के विभिन्न स्वरूप मात्र हैं। यह सर्वविदित है कि दीर्घकाल तक ब्राह्मण अर्थवेद को ऋग्वेद के समान पवित्र नहीं मानते थे। ऐसा भेदभाव क्यों था? ऋग्वेद को पवित्र और अथर्ववेद को अपवित्र क्यों माना गया? मैं इसका यह उत्तर देना चाहता हूँ कि दोनो वेद आर्यों की दो भिन्न–भिन्न जातियों द्वारा रचे गए थे। कालांतर में जब दोनों जातियां मिल कर एक हो गई तो अथर्ववेद को ऋग्वेद के समान पवित्र मान लिया गया।

इसके अतिरिक्त समस्त ब्राह्मण साहित्य में विविध विचार धाराओं में दो भिन्न आर्य जातियों के अस्तित्व के संदर्भ में पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध हैं। सृष्टि सृजन की भिन्नता दो भिन्न वर्गों या जातियों की ओर संकेत करती है। इनमें से एक का वर्णन अध्याय दो में किया जा चुका है। केवल दूसरी विचारधारा का वर्णन बचा है। इसके लिए हम वेदों से प्रारंभ करते हैं :–

तैतिरीय संहिता के श्लोक 6–5.6.1 में निम्नलिखित वर्णन हैं –

''पुत्रों की कामना से अदिति ने देवों और साध्यों के लिए ब्राह्मोदन आहुति तैयार की। उन्होंने उसका कव्य उसको (अदिति को) दिया, जिसे उसने खाया। उसे गर्भाधान हुआ और चार आदित्य ने जन्म लिया। उस ने दूसरी ब्राह्मोदन आहुति तैयार की और सोचा कि जूठन से मरे चार पुत्र पैदा हुए हैं और यदि मैं इसे पहले ही खा लूं तो अत्यंत प्रतिभावान पुत्र पैदा होंगे। ऐसा सोच कर उसने आहुति का पहले ही भक्षण कर लिया। उसे गर्भाधान हुआ और उसने एक अपूर्ण अंडे को जन्म दिया। उससे उसने आदित्यों के लिए तीसरा नैवेद्य तैयार किया। जिससे आदित्य वैवस्वत का प्रदुर्भाव हुआ। यही संतति है अर्थात मानव जो यज्ञ करता है संपन्न होता है और देवों का प्रिय पात्र बनता है।''

अब ब्राह्मण ग्रंथों की सृजन कथाओं को देखें –

1. शतपथ ब्राह्मण 8.1.1.– ''क्योंकि लोग प्रातः ही अपने हाथ धोते हैं इसलिए मनु के हाथ धाने को वे प्रातः काल पानी लाए। जब वे हाथ धो रहे थे तो उनकी अंजलि में एक मछली आ गई। वह उनसे बोली 'मेरी रक्षा करो। मैं तुम्हें बचा सकती हूँ।' मनु ने पूछा 'तुम कैसे बचाओगी' मछली ने उत्तर दिया:– 'एक जल प्रलय से पूरी सृष्टि आप्लावित होगी इससे मैं तुम्हें बचाऊंगी।' मनु ने पूछा, 'तुम कैसे बच सकती हो?' मछली बोली, 'जब तक मैं छोटी हूं मुझे घड़े में रखो। मैं बहुत त्रस्त हूँ क्योंकि बड़ी मछली छोटी को खा जाती है। जब मैं घड़े में रहने योग्य न रहूं तो किसी पोखर में डाल देना, इसके पश्चात तुझे सागर में ले जाना। तब मैं भयमुक्त हो जाऊंगी।' तुरंत ही उसका आकार बढ़ गया। उसने कहा कि 'जब जल प्लावन हो तो तुम नाव में चढ़ कर आना मैं तुम्हें दूर ले जाऊंगी।' इस प्रकार मनु ने मछली को बचा लिया और सागर में ले गए। उसी वर्ष मनु ने एक नाव बना ली। जब जल–प्लावन हुआ तो मनु नाव में सवार हो गए। मछली उनके पास आ गई। उन्होंने नाव का लंगर मछली के सींग में बांध दिया। इस तरह के उत्तरी पर्वत की ओर आ गए। मछली ने कहा कि मैं तुम्हे यहां ले आई हूं। नाव का लंगर किसी वृक्ष में बांध दो। कहीं पानी तुम्हें बहा न ले जाए। तुम पर्वत पर चले जाना और जब पानी उतर जाए तब उससे बाहर आ जाना। इस प्रकार जब सारी सृष्टि नष्ट हो गई तो मनु ही अकेले बचे। अपनी वंश वृद्धि के लिए मनु जलांजलि देते रहे और धार्मिक अनुष्ठान करते रहे। उन्होंने पाक की आहुतियां भी दीं। उन्होंने मक्खन, शुद्ध घी, छाछ और दही की भी आहुतियां दीं। तब एक वर्ष पश्चात एक नारी उत्पन्न हुई। वह स्निग्ध थी। उसके पैरों में घी चिपका था। उसे 'मित्र' और 'वरूण' मिले उन्होंने उससे पूछा तुम कौन हो? उसने उत्तर दिया, 'मनु की पुत्री'। 'तू हमारी है' उन्होंने कहा। उसने कहा, 'नहीं मैं उसी की हूं जिसने मुझे उत्पन्न किया है।' उन्होंने भी उसे अपनाना चाहा। उसे वचन दिया या नहीं किंतु वह वहां से चली गई। तब मनु के पास आई। मनु से पूछा, 'तुम कौन हो?' वह बोली, 'आपने मुझे घी, दूध और दही की आहूति देकर उत्पन्न किया है। मैं आशीर्वाद का प्रसाद हूं। मुझे यज्ञ में होम कर दो। यदि तुम मुझे यज्ञ में होम करोगे तो तुम संतति और पशुओं से संपन्न होगे।'

'मेरे माध्यम से तुम जो भी वरदान चाहोगे तुम्हें मिलेगा। तदनुसार उन्होंने उसे होम कर दिया। इसके पश्चात वह हवनकुंड से अंतिम रूप में प्रकट हुए। उसके साथ उन्होंने पूजा और धार्मिक अनुष्ठान किए। उन्होंने उसके साथ जो भी वरदान मांगे वे उन्हें प्राप्त हुए। वह इड़ा बनी। इसके उपरांत मनु और इड़ा को संतति प्राप्त हुई। उसके साथ उन्होंने जो वरदान मांगे वे मिले।''

2. शतपथ ब्राह्मण 6.1.2.11.–''प्रजापति ने धरा पर जीवों की उत्पत्ति की। उसके लिए तीन औषधियों पकाई गई। वह उसने खाई। वह गर्भवान हुआ। उसने उर्ध्व वायु से देवताओं और अधोवायु से प्राणियों को उत्पन्न किया। प्रजापति ने जैसे चाहा रचना की। प्रजापति ने विश्व रचना की।''

3. शतपथ ब्राह्मण 7.5.2.6– ''प्रारंभ में प्रजापति अकेले थे। उन्होंने खाद्यान्न सृष्टि का विचार किया और उसे साकार किया। अपनी श्वास से पशु, आत्मा से मानव, आंखों से अश्व, सांस से बैल, कान से भेड़ और स्वर से बकरी को पैदा किया। क्योंकि उन्होंने पशुओं की सृष्टि अपने श्वास से की, इसलिए इस मानव ने श्वास को पशु कहा। अतः मानव पशु से श्रेष्ठ और पराक्रमी है। आत्मा ही श्वास है क्योंकि सभी श्वास आत्मा पर आधारित है। चूंकि उसने मनुष्य को अपनी आत्मा से रचा, इसलिए वह कहता है कि मानव भी पशु है। इसलिए सभी मनुष्य हैं।''

4. शतपथ ब्राह्मण 10.1.3.1–''प्रजापति ने जीव रचना की। अपने शरीर के उर्ध्व वासु से देवगण और अधोवायु से प्राणियों की रचना की तदुपरांत संहारक मृत्यु को जन्म दिया।''

5. शतपथ ब्राह्मण 10.4.2.1– ''आरम्भ में यह ब्रहमांड पुरूष रूप में मात्र आत्मा थी। (मैं) हो गया। इसीलिए जब कोई व्यक्ति स्वंय को प्रथम पुरुष में कहता है तो ''अहं'' कहता है और उपस्थित होने पर अन्य पुरूष का नाम पुकारता है। उसने असत को भस्म कर दिया। वह पुरूष कहलाता है। अकेले में वह भयाक्रांत था क्योंकि वह जानता था कि मेरे सिवाय कुछ नहीं है। फिर उसके यह सोचने पर कि वह क्यों डरे, भय दूर हुआ। किसी दूसरे से ही कोई डरता है। पर उसे सुख नहीं मिला। उसने सहभागी की कामना की। अपने लिए साथी की कामना की और एतदर्थ उसने स्वयं को दो भागों में विभाजित किया। परिणामस्वरूप पति–पत्नी का जन्म हुआ। दोनों के सहवास से मानव पैदा हुए। पत्नी यह सोच कर कि पुरुष ने पैदा किया है अतः उसके साथ रमण कर गायब हो गई और गाय बन गई। पुरूष बैल बन गया और मैथुन कर गायों को जन्म दिया। स्त्री घोड़ी बनी, पुरुष घोड़ा बना, स्त्री गधी बनी पुरुष गधा बना। इसके मैथुन से फटे खुर वाले पशु पैदा हुए। तदुपरांत स्त्री बकरी, पुरूष बकरा बना। स्त्री भेड़ बनी पुरूष दुम्बा बना। इस प्रकार चींटी से लेकर सभी प्रकार के नर–मादा पैदा हुए।''

1. तैत्तिरीय ब्राह्मण 2.2.9.2–''आरंभ में यह ब्रह्मांड शून्य था। न आकाश था न पृथ्वी, न वायु। इस शून्य ब्रह्मण ने इच्छा की कि मेरा विस्तार हो। उनसे तेज उत्पन्न हुआ। उस तेज से धुआं प्रकट हुआ। फिर एक तेज उत्पन्न हुआ, उससे प्रकाश निकला। फिर तेज प्रकट हुआ। उस प्रकाश से लौ निकली? पुनः तेज जमा, उससे किरणें उत्पन्न हुई। इसके पश्चात् फिर तेज प्रकट हुआ, उससे लपटें निकली। फिर तेज हुआ और उससे बादल बने। बादल बरस उठे। इससे सागर बना। तभी से मानव समुद्र का जल नहीं पीता, क्योंकि इसे वह प्रजनन का स्थान मानते हैं। इसके उपरांत दास, होत्री उत्पन्न हुए। प्रजापति दास होत्री हैं। वह व्यक्ति सफल मनोरथ होता है जो तप की शक्ति जानता है और उसका अनुशीलन करता है। जब जल द्रवित हुआ तो प्रजापति की आंखो में आंसू आ गए कि मेरे जन्म का प्रयोजन क्या है। उनका जो अश्रु जल में पड़ा वह धरती बन गया, जिसे उन्होंने पौंछ दिया वह वायु बन गया, जिसे उन्होंने पौंछ कर फेंक दिया वह आकाश बना। जिन परिस्थितियों में उनका अश्रुपात हुआ वह अरोदित कहलाता है। उस क्षेत्र को रोद भी कहा जाता है। जो इसका भेद जानते हैं वे घर में कभी नहीं रोते। यह इन शब्दों की उत्पत्ति है। जो इस संसार के जन्म से अवगत हैं उन्हे कोई सांसारिक दुख नहीं व्यापता। उन्होंने धरती को आधार बनाया। उन्होंने कामना की–''मेरा विस्तार हो।'' उन्होंने तप किया वह गर्भवान हुए। उन्होंने अपने उदर से असुरो को जन्म दिया उन्होंने उन्हें मिट्टी के पात्र में आहार दिया। उन्होंने शरीर धारण किया इससे अंधकार फैल गया। उन्होंने फिर विस्तार की कामना की और तपस्या की। फिर गर्भ ठहरा। उन्होंने योनि से प्रजा को जन्म दिया। उन्हें उन्होंने काठ के पात्र में आहार दिया। उन्होंने यह धारणा की तो चन्द्रमाला प्रकाश हुआ। उन्होंने कामना की, मेरा विस्तार हो। उन्होंने तप किया कि गर्भ ठहरे। उन्होंने कांख से ऋतुओं को जन्म दिया। उन्होंने रजत पात्र में घी दिया। उन्होंने फिर शरीर धारण किया, इससे काल का जन्म हुआ जिससे दिन और रात बने। उन्होंने कामना की मेरा

विस्तार हो, उन्होंने तप किया, कि उन्हें गर्भ ठहरे। उन्होंने अपने मुख से देवताओं को जन्म दिया। उन्होंने उनको स्वर्णपात्र में सोम दिया। उन्होंने शरीर धरा। इस से दिन बना। यह प्रजापति की सृष्टि है। जो यह जानता है वह उसे प्राप्त करता है। शून्य से मानव की रचना हुई। ब्रह्मा ने इसे स्वोवास्य कहा है जो व्यक्ति यह जानता है कि ऊषा और संध्या प्रकाशमान होती हैं, उसका संतिति विस्तार होता है और धन–धान्य से संपन्न हो जाता है। वह परमेष्ठि बन जाता है।''

3. तैत्तिरीय ब्राह्मण 2.3.8.1–''प्रजापति ने इच्छा की, मेरा विस्तार हो।'' उन्होंने तपस्या की। वे गर्भवान हो गए। वे पीतांभ–ताम्रवर्णा हो गए। जैसे कि एक गर्भवती स्त्री पीली और ताम्रवर्णा हो जाती है। भ्रूण धारण करने पर वे क्लांत हो गए।

क्लांति के पश्चात उनमें कालिमा युक्त कत्थई रंग का प्रभुत्व हो गया, जैसा कि क्लांत व्यक्ति हो जाता है। उनकी श्वास तीव्र हो गई। श्वास (असु) से असुर उत्पन्न हुए। इस प्रकार असुरों में आसुरी प्रवृत्ति होती है जो असुरों की इस आसुरी प्रवृत्ति को जानता है वह व्यक्ति श्वास युक्त होता है। श्वास उसका परित्याग नहीं करता। असुरों के सृष्टा होने के कारण वे स्वयं को पिता मानते हैं। इसके पश्चात उन्होंने पितरों की रचना की। इसका तात्पर्य है पिताओं के पिता। जो पिताओं के पितृ मर्म जानते हैं वे स्वयं के पिता बन जाते हैं। पिता उनकी आहूति ग्रहण करते हैं। पिताओं की सृष्टि के बाद उनमें प्रकाश उत्पन्न हुआ। इसके पश्चात उन्होंने मानस की रचना की। यह मनुष्यों की मानवता है। जो मनुष्य की मानवता को जानते हैं वे बुद्धिमान होते हैं। मानव उनका परित्याग नहीं करता। जब वे मानवों की सृष्टि कर रहे थे तो स्वर्ग में दिन का उदय हुआ। फिर उन्होंने देवों की रचना की। यह देवों को देवत्व हैं जो देवों का देवत्व जानते हैं उनके लिए स्वर्ग में दिवस का उदय हुआ। ये चार धाराएं हैं, जैसे देव, मानव , पितृ और असुर। इन सब में जल वायु के समान है।

4. तैत्तीरी ब्राह्मण 3.2.3.9 शूद्र शून्य से जमा। तैत्तीरीय आरण्यक ने सृष्टि के आरंभ की निम्नांकित व्याख्या की है –

तैत्तीरी आरण्यक 1.2.3.1. सर्वत्र जल ही जल था, कमल पत्र पर प्रजापति अकेले थे। अपने मन में उन्होंने विचार किया, 'मैं रचना करूं, मनुष्य जैसे कोई इच्छा करता है वह वाणी से प्रकट करता है और कार्यरूप देता है। इस प्रकार यह मंत्र प्रस्फुटित हुआ, पहले इच्छा उत्पन्न होती है जो मानस का प्रथम तंतु है। ऋषि अपनी मेधा से उसका अनुसंधान करते हैं, मनन करते हैं। जैसा विद्यमान और अविद्यमान के बीच है। ऋग्वेद 10–129.4। जो यह जानते हैं कि मानव मानस में इच्छा उत्पन्न होती हैं उन्होंने तपस्या की और तपश्चर्या से शरीर धारण किया। उनके शरीर के मांस से अरूण, केतु और वातरसन ऋषियों का जन्म हुआ। नाखूनों से वैखानस और बालों से बालखिल्य पैदा हुए। रक्त ने जल के मध्य विचरण करते हुए कच्छप का स्वरूप ग्रहण किया। प्रजापति ने कच्छप से कहा–''तुम मेरे मांस चर्म से जन्मे हो।'' कच्छप ने कहा–नहीं मैं तो पहले भी था। तब सहस्र मुख, नेत्र और सहस्र पैरों वाले पुरूष का जन्म हुआ। (ऋग्वेद 10.90.1)। प्रजापति ने कहा–आप मुझ से पहले पैदा हुए हैं अतः आप सृष्टि की रचना करें।

पुरूष ने जलंलि में जल लेकर पूर्व की ओर फेंका और कहा–''तुम सूर्य बन जाओ।'' जिस दिशा से सूर्य पैदा हुआ वह पूर्व दिशा कहलाई। अरूण केतु के दक्षिण में जल फेंकर कर 'हे अग्नि' कहा तो अग्नि उत्पन्न हुई। पश्चिम में जल फेंक कर 'हे वायु' कहा तो वायु का जन्म हुआ। उत्तर की ओर जलांजलि देने पर कहा 'हे इन्द्र' तो इन्द्र उत्पन्न हुए। तत्पश्चात अरूण केतु ने जल का मध्य में रख कर पूषण को जन्म दिया। जल को ऊपर रख कर उसने देव, मानव, पितृ, गंधर्व और अपसराओं की रचना की। ऊपर से गिरी जल की बूंदों से असुर, राक्षस और पिशाच पैदा हुए। चूंकि वे बूंदो से उत्पन्न हुए इसलिए वे लुप्त हो गए। अतः उन्होंने यह कहा–''जब महाजल गर्भवान हो गया, मेधा संपन्न हुआ और स्वयंभू को उत्पन्न किया। उससे सृष्टि की रचना हुई। यह सब जल से उत्पन्न हुआ, इसलिए यह सब ब्रह्म–स्वयंभू है। इस प्रकार यह सब शिथिल था, अस्थिर था। वह प्रजापति था। उसने स्वयं से स्वय की रचना की और आत्मसात हो गया। तब इस मंत्र का उच्चारण किया, विश्व रचना करके, विद्यमान की रचना करके दिग–दिगंत की सृष्टि कर सर्वप्रथम प्रजापति उत्पन्न हुए और स्वयं आत्मसात हो गए।''

VI

अतः महाभारत भी विश्व रचना का वर्णन हैं महाभारत वे वनपर्व का मूल मनु को बताया गया है–

वैवस्वत मनु के पुत्र मनु प्रजापति के समान तेजस्वी ऋषि थे। उन्होंने जल के मध्य एक पांव पर खड़े होकर ऊपर हाथ उठा कर निर्निमेष होकर निरंतर दस हजार वर्ष तक विस्तीर्णा बद्री में अपने पूर्वजों से भी कठोर तप किया। वसन तार तार और केश प्रभाहीन हो गए। चिरणी नदी के तट पर एक मछली उनके निकट आई और बोली, हे प्रभो! मैं निरीह भयाक्रांत मीन हूं। बड़ी मछलियों से मेरी रक्षा करो क्योंकि बड़े मच्छ छोटी मछलियों को निगल जाते हैं। मेरी त्राण करें। मैं आपको इसका प्रतिफल दूंगी। दयार्द्र मनु ने मछली को जल से निकाल कर एक पात्र रख लिया। आकार बढ़ने पर उसे पोखर में रखा हालांकि पोखर दो योजन लंबा और एक योजन चौड़ा था। वह कमल नैन मीन को छोटा पड़ा और वे उसे गंगा में ले गए। फिर मछली ने कहा, यह स्थान कम है। मनु उसे सागर के जल में छोड़ने गए। समुद्र के जल का स्पर्श होते ही मतस्य ने मानव की भाषा में मनु से कहा–आपने मेरी हर तरह से रक्षा की। अतः मैं आपको बताना चाहती हूं कि समस्त सृष्टि पर संकट छा रहा है। निकट भविष्य में सभी चराचर जीव, पदार्थो का अस्त होने वाला है। अब विश्व की शुद्धि का समय आ गया है। मैं तुम्हें बताती हूं, क्या शुभ होगा। आप शीघ्र एक मजबूत नाव बना कर सप्तर्षियों के साथ सभी प्रकार के जीवों के बीज लेकर सागर तट पर आकर मेरी प्रतीक्षा करें। आप मुझ को मेरे सींग से पहचान लेंगे। मैं आपका अभिभादन करूंगी। आइए और जल्दी कीजिए। इतना कह कर मत्स्य जल में विलीन हो गई। मनु, लौटे और शीघ्र ही एक मजबूत जलपोत में सत्पर्षियों और समस्त पदार्थों के बीज के साथ सागर के किनारे जा पहुंचे। मत्स्य उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। मनु ने शीघ्रता के साथ जलपोत की रस्सी मत्स्य के सींग के साथ बांध दी। मत्स्य तीव्र गति से गरजती उमड़ती समुद्र की लहरों पर नाव को खींचता चला। समुद्र के आलोड़न–विलोडन में मदमस्त नारी की तरह नाव बहती गई। धरती लुप्त हो गई थी। वायु और आकाश के अतिरिक्त सर्वत्र जल ही जल था और उस जल में सप्तर्षियों सहित मनु और मतस्य थे। अनेक वर्षों के अथक प्रयास से मत्स्य उनको हिमवत पूर्वत की उच्चतम चोटी तक ले आया और स्मित मुस्कान के साथ ऋषियों से नाव को पर्वत के नौबंधन शिखर से बांधने को कहा। नाव के रूकने पर मित्र मत्स्य ने ऋषियों को संबोधित करते हुए कहा–मैं ब्रह्मा, प्रजापति, ब्रह्म हूं। तुम्हें जल से उबार लाया हूं। अब मनु सभी जीवों, पदार्थों, देवजनों असुरों, मानवों और चर–अचर पदार्थों की रचना करेंगे। यह कह कर मत्स्य अंतर्ध्यान हो गया। मनु ने तपोबल से अंतर्दृष्टि प्राप्त की। उन्होंने घोर तप किया और सृष्टि का आरंभ कर दिया।

महाभारत के आदि पर्व में सृजन कथा एकदम ही भिन्न है–

वैशम्पायन ने कहा– ''मैं स्वयं प्रजापति द्वारा देवताओं और अन्य जीव पदार्थों के सृजन और विनाश की कथा सुनाता हूं।

ब्रह्मा के मरीचि, अत्रि, अंगिरस, पुलस्त्य, पुलह और कृत 6 पुत्र हुए। मरीचि के पुत्र कश्यप से सभी जीव पैदा हुए। दक्ष प्रजापति की अदिति दिति, दनु कला, दनयु, सिमुक, क्रोध, प्रथा, विश्वा, विनता, कपिला, मुनी और कुद्र तेरह श्रेष्ठ कन्याएं थी। इनके असंख्य यौद्धा पुत्र और शक्तिशाली पौत्र हुए।

''ब्रह्मा के सीधे हाथ के अंगूठे से महर्षि दक्ष और बाएं अंगूठे से उनकी पत्नी पैदा हुई। महर्षि की पत्नी से 50 कन्या रत्न प्राप्त हुए। महर्षि दक्ष ने इनमें से दस धर्म को, सत्ताईस इन्द्र (सोम) को दैवी परंपरा के अनुसार तेरह कश्यप को दे दी।

पितामह प्रजापति के उत्तराधिकारी मनु उनका पुत्र था। (यह स्पष्ट नहीं है कि वह किस के पुत्र थे। मनु के पुत्र आठ बसु थे। ब्रह्मा के दक्षिण वक्ष के धर्म में जन्म लिया। तेजस्वी धर्म के तीन पुत्र हुए। साम, काम और हर्ष (शांत, प्रेम, आनंद), जो सभी प्राणियों को प्रिय थे, वे अपनी शक्ति से विश्व को ऊर्जा देते हैं। भृगु पुत्र च्यवन की पत्नी मनु की पुत्री आरूशि थी। ब्रह्मा के दो अन्य पुत्र धातृ और विधातृ मनु के साथी थे। कमलवासिनी परम सुंदरी लक्ष्मी उनकी बहन थी। उनके मस्तिष्क से जन्म लेने वाले पुत्र अश्व थे जो आकाश में विचरते थे। भूख में जीवों द्वारा एक दूसरे को आहार बना देने के कारण अधर्म का जन्म हुआ। निरूति उनकी पत्नी थी। निरूति के नाम पर ही राक्षस नैरूत कहलाए। निरूति उनकी पत्नी थी। निरूति ने तीन दुष्कर्मी पुत्रों भय, महाभय और मृत्यु को जन्म दिया। मृत्यु के पत्नी या पुत्र नहीं थे क्योंकि वह स्वयं ही सब का अंत करने वाले थे।''

''प्राचेतस के दस ऋषि पुत्रों का जन्म हुआ। जिनके मुख से निकली अग्नि से सभी महान पुरूष जल गए। उन से दक्ष प्रचेतस का जन्म हुआ और दक्ष से समस्त जीवों का। एक सहस्र पुत्र प्राप्त हुए। देवर्षि नारद ने उनकी मुक्ति कर सांख्य का उपदेश दिया। संतति के इच्छुक दक्ष प्रजापति ने पचास कन्याओं का जन्म दिया। इनमें से दस धर्म को, तेरह कश्यप को और 27 इन्द्र (सोम) को मिली। मरीचि पुत्र कश्यप ने अपनी तेरह पत्नियों में दक्षयानी से इन्द्र, आदित्य और विवस्वत को उत्पन्न किया। विवस्वत के पुत्र यम वैवस्वत हुए मार्तदण्ड (सूर्य विवस्वत) से अत्यंत विद्वान मनु और यम पैदा हुए। मनु से मानव जाति का आरंभ हुआ। ब्राह्मण और क्षत्रिय पैदा हुए। ब्राह्मण वेद वेदागों के ज्ञाता हुए। मनु के दस पुत्र येण, घृष्णु, नारीश्यांत, नाभाग, इक्ष्याकु, कृश, सारयाति, इला, पोरिशिद्र और नाभागारिष्ट हुए। तथा अन्य मनुष्य पैदा हुए। मनु के पचास पुत्र और भी थे जो सदैव आपस में लड़ते झगड़ते रहते थे। बाद में इला के पुत्र पुरूरवा हुए। कहा जाता है कि इला इनकी माता और पिता दोनों ही थी।

VII

रामायण के द्वितीय कांड में सृष्टि रचना का वर्णन इस प्रकार किया गया है –

''वशिष्ठ ने राम को बताया– ''विश्व के विनाश और पुनर्रचना के मूल को जाबाली भी जानती हैं, तदापि हे भूपति विश्वोत्पत्ति के संबंध में आप मुझ से सुनें। प्रारंभ में सर्वत्र जल ही जल था। जल से पृथ्वी बनी। तदुपरांत आराध्यों के साथ स्वयंभू ब्रह्मा उत्पन्न हुए, वे बाराह शूकर बन गए। उन्होंने पृथ्वी को ऊपर उठाया और अपने सात पुत्रों के साथ विश्व रचना की। ब्रह्मा से मरीचि और मरीचि से कश्यप का जन्म हुआ। कश्यप के पुत्र विवस्वत से मनु का जन्म हुआ। मनु के पुत्र इक्ष्वाकु हुए। इक्ष्वाकु अयोध्या के पहले राजा थे।''

विश्वोत्पति की एक अन्य कथा तीसरे कांड में है जो इस प्रकार है –

''राम के शब्द सुन कर जटायु ने अपनी जाति और समस्त जीव पदार्थों की उत्पत्ति बताई–''सुनो, मै प्रजापतियों के आविर्भाव का वृतांत सुनाता हूं, जिनका जन्म सर्वप्रथम हुआ। कर्दम प्रथम प्रजापति थे। उनके बाद निकृत, शेष समसराय तेजस्वी बाहुपुत्र, स्थाणु, मरीचि, अत्रि, कृति, पुलस्त्य, अंगिरस, प्रचेतस, पुलह, दक्ष, विवस्वत और अरिष्टनेमि हुए और अंतिम प्रजापति यशस्वी कश्यप हुए। प्रजापति की साठ पुत्रियां थी। कश्यप अदिति, दिति, दनु, कलक, ताम्र, क्रोधवास, मनु और अनला नामक आठ कन्याओं से विवाह किया और त्रिभुवन की वृद्धि के लिए अपने समान यशस्वी पुत्रों के जन्म की याचना की।

अदिति, दिति, दनु, और कलक के अतिरिक्त सबने अहसमति प्रकट की, अदिति से तेंतीस देवता, आदित्य, बसु, रूद्र, और दो अश्विनी कुमार पैदा हुए। कश्यप की पत्नी मनु ने अपने मुख से ब्राह्मणों, वक्ष से क्षत्रियों और जंघाओं से वैश्यों तथा पैरों से शूद्रों को जन्म दिया। ऐसा वेद में बताया गया है। अजला से समस्त वनस्पति और फल पैदा हुए।

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

VIII

उदाहरण के रूप में अब पुराणों को देंखते हैं कि उनमें क्या बताया गया है। विष्णु पुराण में लिखा है –

''आदि में विश्वनियता हिरण्यगर्भ ब्रह्मा थे जो विष्णु भी थे, जो ऋक, यजुस, सामस और अथर्ववेद के समान थे। ब्रह्मा के दाएं अंगूठे से प्रजापति दक्ष का जन्म हुआ। दक्ष की एक पुत्री थी अदिति। अदिति ने विवस्वत को जन्म दिया। विवस्वत से मनु हुए। मनु के इक्ष्वाकु, नृग, धृष्ट, सर्याति, नरिश्यांत, प्रमशु, नाभगणेदिष्ट, कृष्ट और पृशाध्र हुए।''

पुत्रोत्पत्ति की कामना से मनु ने मित्र और वरूण के निमित्त यज्ञ किया। किंतु यज्ञ पुरोहित की त्रुटि से इला नामक कन्या उत्पन्न हुई। मित्र और वरूण की कृपा से इला मनु के पुत्र सुघुम्न के रूप में आ गई। कालांतर में वह ईश्वर (महादेव) के कोप से फिर स्त्री बनी और सोम (चन्द्रमा) पुत्र बुध के आश्रम के निकट चक्कर काटने लगी। बुध उस पर आसक्त हुआ। और उसके साथ सहवास कर पुरूरवा को जन्म दिया। ऋषियों के अनुरोध पर यज्ञ देवता ने इला को फिर से सुधम्न बना दिया।''

विष्णु पुराण में मनु के पुत्रों का विवरण निम्न प्रकार है–

(अ) गुरू की गाय के वध के कारण पृशध्र शूद्र हो गए।

(ब) कृश से क्षत्रिय पैदा हुए।

(स) नेदिष्ट के पुत्र नाभाग वैश्य हुए।''

यह सूर्यवंश की कहानी है। विष्णु पुराण में अन्य समानांतर कथा भी है जिसके अनुसार चन्द्रवश का उदय अत्रि से बताया जाता है। जैसे कि मनु से सूर्यवंश आरंभ हुआ।

''अत्रि ब्रह्मा के पुत्र और सोम (चन्द्रमा) के पिता थे। ब्रह्मा ने सोम (चन्द्रमा) को वनस्पति, ब्राह्मण और तारागण का साम्राज्य दिया। राजसूय यज्ञ के उपरांत सोम ने गर्वान्वित हो देव पुरोहित बृहस्पति की पत्नी तारा का हरण कर दिया। ब्रह्मा, ऋषिगण और देवताओं के समझाने पर भी उसे लौटाने को सहमत न हुए। उषाण ने सोम का पक्ष लिया और अंगिरा के शिष्य रूद्र ने बृहस्पति का। देवों ने एक पक्ष और दैत्यों ने दूसरे पक्ष की सहायता की और दोनों पक्षों में भीषण युद्ध हुआ। ब्रह्मा ने मध्यस्था की और तारा को बृहस्पति के पास लौटाने के लिए सोम को बाध्य किया। तारा लौटाई गई लेकिन तब तक गर्भ धारण कर चुकी थी। उसने बुध को जन्म दिया। पूछताछ करने पर उसने सोम को बुध का पिता स्वीकार किया। मनु पुत्री इला को इसी बुध से पुरूरवा नामक पुत्र की प्राप्ति हुई। पुरूरवा के 6 पुत्र हुए जिनमें आयुस ज्येष्ठ थे। आयुस के पांच पुत्र नहुष, क्षात्रबुद्ध, रंभा, राजी और अनेनस हुए। क्षात्रबुद्ध के एक पुत्र सुनाहोत्र हुए। सुनाहोत्र के कासलेस और गृतसदग तीन पुत्र हुए। गृतसमद का सौनक पुत्र हुआ जिसने चार वर्ण व्यवस्था का आरंभ किया। कासलेस के काशीराज पुत्र हुए और उनके पुत्र दीर्घन्तमां तथा दीर्घत्तमा के पुत्र धन्वन्तरि हुए।''

विश्वोत्पत्ति की इन कथाओं की तुलना इस पुस्तक के द्वितीय अध्याय में चर्चित विवरण से निम्नांकित दो मत स्पष्ट होते हैं।

(1) एक वृतांत सांसारिक है और दूसरा नैसर्गिक।

(2) एक कहता है कि मनु मनुष्य थे और उनसे ससी प्राणी पैदा हुए, और दूसरा ब्रह्मा या प्रजापति द्वारा सृष्टि की रचना मानता है।

(3) एक ऐतिहासिक सत्य है दूसरा दैविक।

(4) एक में प्रलय का वर्णन है दूसरा इस विषय में मौन है।

(5) एक का लक्ष्य चातुर्वर्ण्य का वर्णन है तो दूसरे का लक्ष्य समाज के आदि उदगम् की व्याख्या है।

ये मौलिक भिन्नताएं हैं विशेष रूप से चातुर्वर्ण्य के संबंध में। सांसारिक मत चातुर्वर्ण्य को देवी मान्यता है जब कि नैसर्गिक मत इसके प्रतिकूल है। यह सत्य है कि रामायण और पुराणों में दो अलग विचार धाराओं को मिला कर यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि मनु से ही चातुर्वर्ण्य व्यवस्था का जन्म हुआ लेकिन यह प्रयास जान बुझ कर और पूर्व प्रतिपादित मत का अनुसरण है। इन दोनों मतों से ऐसी बुनियादी भिन्नता है कि इस चेष्टा के बाद भी दोनों मतों में भिन्नता स्पष्ट है। हमारे सामने के दो सिद्धांत स्थापित होते हैं।

पहला यह कि यह पुराणों द्वारा प्रचारित दैविक व्यवस्था है और दूसरा यह कि यह नैसर्गिक और मनु के पुत्रों में विकसित हुआ। इनका परिणाम इतना विचित्र है कि दोनों सिद्धांतों में मौलिक मतभेद है। खेद है कि शोधकर्ताओं का ब्राह्मण साहित्य में वर्णित इन दो परस्पर विरोधी सिद्धांतो पर ध्यान नहीं गया। फिर भी इनके अस्तित्व और यथार्थ की अवहेलना नहीं की जा सकती। इन दो विरोधी मतों की भिन्नता का अर्थ है दो भिन्न आर्य जन श्रेणियां। एक चातुर्वर्ण्य को मानती थी और दूसरी इस व्यवस्था से सहमत नहीं थी। बाद में दोनों मिल कर एक हो गई।

IX

मेरे नृवंशशास्त्र संबंधी विचार पर तीसरा और अकाटय तर्क सर हरबर्ट रिस्ले द्वारा भारत वासियों का वर्ष 1901 में किया गया सर्वेक्षण है। इसके अनुसार शीर्षाभिसूचक तालिका से निष्कर्ष निकलता है कि भारतवासी (1) आर्य , (2) द्रविड़, (3) मंगोल और (4) सीथियन नामक चार विधि जातियां के मिक्षण हैं। उन्होंने इनके मूल स्थान का भी सविस्तार विवरण दिया गया है उनका सर्वेक्षण सामान्य है। डा. गुहा ने उनके इस मत की मीमांसा सन् 1936 में की। इस सर्वेक्षण का भारतीय नृविज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान है। उन्होंने (डा. गुहा) जो मानचित्र तैयार किया है उससे भारतीय लोगों के शिरोमाप मामले में अच्छा खासा प्रकाश पड़ता है। डा. गुहा के अनुसार भारतीय लंबे सिर वाली और छोटे सिर वाली दो जातियों के मिश्रण हैं। लंबे सिर वाली जाति देश के मध्यवर्ती भाग तथा छोटे सिर वाली सीमावर्ती क्षेत्रों की निवासी थी। इस मत की पुष्टि भारत के विभिन्न भागों में प्राप्त मानव खोपड़ियों से होती है। डॉक्टर गुहा कहते हैं– उपरोक्त क्षेत्र के प्रागैतिहासिक अवशेष वैसे तो अति अल्प हैं किंतु सिंधु घाटी को छोड़ कर तत्कालीन भारतीय–प्रजाति–इतिहास की रूपरेखा दृष्टिगोचर होती है। ईसा के चार करोड़ वर्ष पहले भारत के उत्तर पश्चिम में लंबे सिर और पतली नाक वाली जाति का प्रभुत्व था। इसके साथ ही लंबे चेहरे तथा चपटी नाक वाली एक अन्य बलिष्ठ मानव जाति के अस्तित्व का भी पता चलता है। हालांकि दोनों की नासिकाओं में कम ही अंतर था।''

''हड़प्पा में मिली मानव खोपड़ियों से एक तीसरी श्रेणी चौड़े सिर के मानव के अस्तित्व का पता चलता है।''

संक्षेप में भारतीय प्रजाति लम्बोत्तरे सिर वाली अथवा भूमध्यसागर के क्षेत्र की ओर छोटे सिर वाली अथवा ''अल्पाइन'' क्षेत्र की है।

भूमध्यसागर क्षेत्र की जाति के विषय में कहा जाता है कि यह भारत में योरोप से आई जो आर्य भाषा बोलती थी। यह माना जाता है कि ये भूमध्यसागर के क्षेत्र से भारत आए। इसके स्थान निर्धारण से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह निश्चय ही अल्पाइन जाति के पश्चात भारत में आई होगी।

इसी प्रकार अल्पाइन जाति के संबंध में साक्ष्य जुटाने पड़ेंगे। पहला प्रश्न यह है कि अल्पाइन जाति का मूल निवास कहां था और दूसरा यह कि वह कौन सी भाषा बोलते थे। प्रो. रिप्ले के अनुसार यह स्थान एशिया में हिमालय के आसपास ही कहीं था। उनका तर्क उन्हीं के शब्दों में इस प्रकार है –

''यह कहने का हमें क्या अधिकार है कि पूर्व से होने वाला यह आव्रजन है–कोई विजय नहीं है। क्या हर बात से संकेत नहीं मिलता कि यह एक क्रमिक शांति पूर्ण आव्रजन था? प्रायः निर्जन क्षेत्रों में बस जाने के कारण क्या यह संकेत करता है कि आव्रजन एशिया की दिशा से हुआ? इस का प्रमाण महाद्वीप के निवासियों की जानकारी पर निर्भर करता है, विशेष रूप से पश्चिम हिमालय के पामीर पठार के लोगों की जानकारी पर। यह संसार की छत कहलाता है। मैक्समूलर और आरंम्भिक विद्वानों ने जहां इसे आर्य सभ्यता का आरंभिक शैशव स्थल बताया है जहां ऐसा मानव रहता था जो ठीक उस जाति से मिलता जुलता है जो अल्पाइन और सेल्टिक में रहती थी डी उजफाल्वी, टोपीनार्ड और अन्य अनुसंधान करता उनके आसपास के विचित्र क्षेत्रों का निवासी होने का संकेत देते हैं। गाल्चा, लाजिक पर्वत माला और उसके पड़ोस के लोगों की आंखे भूरी, बाल काले, अच्छी कद–काठी है, अधिकांश भागों में शिरोमाप 86 है। इस क्षेत्र से इसी शरीरिक श्रेणी के लोगों की श्रृंखला अनवरत रूप से पश्चिम की ओर एशिया माइनर और यूरोप में फैलती गई। अल्पाइन लोगों द्वारा अधिग्रहीत पश्चिम एशिया के व्यापक क्षेत्रों के अनुसंधान का एकमात्र बिंदु यह है कि इस प्रजाति की विशिष्टताओं की घनिष्टता पर बल देता है। टैपीनर के अनुसार एशिया से आव्रजन का यह कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है। जब हम चौड़े सिर वाले लोगों के मूल निवास का पता लगाना चाहते हैं तो हमारा ध्यान पूर्व की ओर जाता है। इस जाति के मूल आधार के धुंधले संकेत मिलते हैं। वह पश्चिमोन्मुख नहीं है क्योंकि अटलांटिक से यह प्रजाति धीरे–धीरे लुप्त हो गई। हमें केवल अफ्रीका नीग्रो जाति के रूप में लंबे सिर वाली जाति का पता चलता है। इस प्रकार अल्पाइन जाति का मूल स्थान पूर्व में और मेडिटरेनियन जाति का मूल स्थान दक्षिण में सिद्ध होता है।''

प्रायः इस बात पर कुछ मतभेद हैं कि योरोप में आर्य भाषा का प्रचलन नौर्डिक्स (इंडो जर्मन) अथवा अल्पाइन जाति द्वारा किया गया। किंतु सभी विद्वान यह स्वीकार करते हैं कि अल्पाइन लोगों की भाषा ''आर्य'' थी। अतः अल्पाइन आर्य थे।

X

उपरोक्त तथ्य ऋग्वेद के इस कथन की पुष्टि करते हैं कि नृविज्ञान और ऐतिहासिक दृष्टि से भारत में आर्यों की दो जनजातियाँ थी, न कि एक। वहां इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि ऋग्वेद के प्रमाण साक्ष्य और पाश्चात्य मत में परस्पर विरोध हैं क्योंकि पाश्चात्य सिद्धांत आर्य प्रजाति की बात कहता है जबकि ऋग्वेद से इस गहन विषय पर विभेद है। उनके मत को स्वीकार नहीं किया जा सकता।

इस विरोधाभास से ''आक्रमण'' और ''विजय'' के संबंध में भी मतभेद पैदा होते हैं। हम नहीं जानते कि आर्यों की किस जाति का आगमन भारत में पहले हुआ। किंतु यदि हिमालय के निकटवर्ती क्षेत्रों के निवास करने वाली अल्पाइन जाति पहले आई थी तो आर्यों के बाहर से आने और आक्रमण करने का सिद्धांत ही गलत सिद्ध हो जाता है। जहां तक भारत के मूल निवासियों पर विजय की बात का संबंध है, इस प्रश्न का उत्तर इतना सरल नहीं है जितना पाश्चात्य विद्वान समझ बैठे हैं। प्रायः यह संभावना व्यक्त की जाती है कि दास और दस्यु भारत के मूल निवासी थे और आर्यों से भिन्न जाति थे। आर्यों ने उन्हें पराजित किया, यह तो एक काल्पनिक उड़ान मात्र है। यह भी तो संभव है कि आर्यों ने आर्यों को ही विजित किया हो। अतः इस संदर्भ में कि किस आर्य जाति के दास और दस्यु जाति पर विजय प्राप्त की उसका अनुसंधान आवश्यक है।

जैसा कि स्पष्ट है, यह निष्कर्ष पश्चिमी लेखकों के सिद्धांत तथ्यों के अपर्याप्त अन्वेषण से उतावली में निकाले गए निष्कर्ष पर आधारित हैं। प्राचीन आर्यों की अनुमानित मान्यताओं एवं उनके तथाकथित वंशज भारतीय जर्मन जातियों की मान्यताओं के आधारों में समानता एकरूपता के पूर्व स्थापित मत के आधार पर इसको सत्य मान लिया गया है। यह सिद्धांत केवल कुछ सुनी सुनाई बातों को अंतिम साक्ष्य मान कर निर्धारित किया गया है। वास्तव में गंभीर चिंतको, शोधकर्ताओं के लिए अप्रमाणित आधार पर प्रतिपादित यह पश्चात्य सिद्धांत दीर्घकाल तक मान्य रहा है, यह असाधारण है। इस अध्याय में चर्चित नवीन प्रमाणों के समक्ष तो यह टिक ही नहीं सकता। अतः अमान्य है।

साभार
बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर संपूर्ण वाङ्मय
खंड 13 पृ.सं. 63 से 76 तक।

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

हमारे आदर्शहीन आदर्श समाज पर क्यों थोपे जाते हैं?

किसी देश के समाज व संस्कृति का जो स्वरूप बनता है उसका आधार वे आदर्श होते हैं जिन्हें महापुरूष कहा जाता है। ये महापुरूष धार्मिक, राजनीतिक व सामाजिक किसी भी क्षेत्र के हो सकते है। देश का इतिहास, धर्म और संस्कृति इन्हीं की देन होते हैं। इन्हीं के कार्यों और प्रेरणा से अद्भुत वहां के जनजीवन का एक निश्चित स्वरूप बनता है। अगर ये आदर्श सचमुच में महान होते हैं तो शाश्वत ढंग की ऐसी धर्म व समाज व्यवस्था देश में कायम कर जाते हैं जिसमें समाज का सब से निर्बल वर्ग न केवल समान रूप से धर्म और न्याय का अधिकारी होता है वरन उसके लिए विशेष शक्ति और गति प्राप्त करने का संरक्षण व प्रबंध भी होता है।

इसके विपरीत अगर आदर्श स्वयं किन्हीं निहित स्वार्थो को ले कर चलते हैं या किन्हीं दूसरों के स्वार्थों को ले कर चलते हैं या किन्हीं दूसरों के स्वार्थों के लिए थोपे जाते हैं तो अपनी विशिष्ट कुंठाओं से ग्रस्त जिन व्यवस्थाओं को वे जन्म देते हैं वे आगे चल कर समाज घातिनी सिद्ध होती है। जनजीवन विषाक्त होता जाता है। धीरे धीरे उस देश में रहने वालों में न्याय और धर्म के प्रति सजगता समाप्त हो जाती है।

दुर्भाग्य से हिंदू धर्म में आदर्शों का बहुत कुछ ऐसा ही स्वरूप रहा है। ऐसा कई कारणों से हुआ है। एक महत्वपूर्ण कारण तो यह रहा कि हमारे आदर्श निर्बल और पददलित वर्ग के प्रतिनिधि नहीं रहे। वे या तो राजा थे या क्षत्रिय व ब्राह्मण वर्ग में से। उन्हें पददलितों की पीड़ा का कोई भान ही नहीं था। नीचे वाले वर्ग को न्याय और प्रतिष्ठा दिलाने में उन की कोई रूचि नहीं थी। भेद और घृणा के विरूद्ध वे कभी लड़े नहीं, बल्कि उसकी रक्षा ही की।

मर्यादा पुरूषोत्तम कहलाने वाले राम को जब यह पता चला कि उनके राज्य में एक शूद्र शंबूक तपस्या कर रहा है, तो उन्होंने उसका सिर काट डाला। श्रेष्ठ धनुर्धर अर्जुन को जब पता चला कि एकलव्य नामक शूद्र उन्हीं की तरह धनुर्विद्या में कुशल हो गया है, तो उन्होंने गुरू से कहकर गुरू दक्षिणा के नाम पर उसका अंगूठा ही कटवा कर उसे सदा के लिए इस विद्या के उपयोग से वंचित कर दिया।

रामायण और महाभारत काल के इन दो उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि समाज की मेहनत और ईमानदारी से सेवा करने वालों की क्या स्थिति थी। यही स्थिति स्त्रियों की थी। रामायण काल में सीता और महाभारत काल में द्रौपदी इसके उदाहरण हैं। समाज व धर्म के ठेकेदारों को इस देश में स्त्रियों और शूद्रों का उभरना कभी अच्छा नहीं लगा। हमारे आदर्शों ने भी इन्हीं ठेकेदारों को खुश रखने का काम किया।

इसका एक कारण यह भी रहा कि हमारे आदर्श ऐतिहासिक पुरूष नहीं रहे। ब्रह्मा, विष्णु, महेश, राम, कृष्ण, गणेश, हनुमान, दुर्गा, सीता, राधा, सरस्वती, लक्ष्मी, पार्वती आदि; जिनका हिंदू समाज व संस्कृति में बहुत महत्त्व है, ऐतिहासिक कम और पौराणिक अधिक हैं। इतिहास का आदर्श पुरूष अपने समाज की उपज होता है। ईसा मसीह, मोहम्मद पैगंबर तथा महात्मा बुद्ध की तरह तत्कालीन समाज व धर्म व्यवस्था में जो दोष आ जाते हैं उन्हें दूर करने के लिए वह पैदा होता है। उस युग में प्रतिस्थापित निहित स्वार्थों से टक्कर लेने की शक्ति व साहस उनमें होता है और इसी से वे महान कहलाते हैं। वे मानव समाज के सुखदुख को समझने वाले और न्याय दिलाने वाले होते हैं। उनके व्यक्तित्व व आचरण का प्रभाव इतना तीव्र, तीखा और सच्चा होता है कि आगे आने वाली पीढ़ियां स्वभावतः उनका अनुकरण करती चलती हैं।

इसके विपरीत पौराणिक आदर्श किसी वर्ग विशेष की स्वार्थ पूर्ति के लिए जनजीवन पर थोपे हुए होते हैं। समाज व धर्म के यथास्थिति स्वरूप को कायम रखना ही उनका उद्देश्य होता है। उनका आदर्श थोपा हुआ होता है और दिखावे की चीज रह जाता है। उसकी पकड़ ढीली होने से वह जनजीवन में उतर नहीं पाता। जनजीवन में उतरने के लिए कई दार्शनिक व धार्मिक व्यवस्थाएं करनी पड़ती हैं। अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए उन्हें ऐसा करना पड़ता है, अन्यथा थोड़े दिनों के बाद उनके स्वार्थों की पोल खुलने का डर रहता है।

यही कारण है कि शूद्र वर्ग को जन्मजन्मांतर तक शूद्र रखने के लिए कर्म, पुनर्जन्म और मोक्ष के सिद्धांतों को समाज में स्थापित किया गया और उन्हें हमारे सामाजिक व धार्मिक जीवन का इतना महत्त्वपूर्ण अंग बना दिया गया कि सारा शूद्र कहा जाने वाला समुदाय आत्मसम्मान से हीन पशु तुल्य जीवन बिताने के लिए बाध्य हुआ। उन्हें सभी प्रकार के अधिकारों से विहीन करके उनके मन में विद्रोह पैदा न हो जाए इसकी भी पक्की व्यवस्था कर दी गई।

धर्म व समाज के रक्षक वर्ग ने अपने संकुचित व निकृष्ट स्वार्थों की पूर्ति के लिए, अपने देश के आदर्शों का जैसा दुरूपयोग किया उसकी मिसाल दुनिया के इतिहास में कहीं भी नहीं मिलेगी। दूसरे देशों ने अपने संकुचित स्वार्थों व धर्म की रक्षा के लिए रक्त बहाने की बेवकूफी जरूर की लेकिन धर्म के नाम पर, अपने ही धर्मावलंबियों को अपने स्वार्थ एवं अहं की रक्षा के लिए जन्मजन्मांतर तक शोषित रखने का निंदनीय कार्य कभी नहीं किया। उनके कार्यों में नादानी रही, हमारे कार्यों में धूर्तता। धोखा देकर अधर्म को धर्म मनवाने की जो व्यवस्था हमने सौंपी वह अत्यंत ही हेय कार्य था। उनके निहित स्वार्थों का इसी से पता चलता है कि जिस किसी ने ब्राह्मण संस्कृति का विरोध किया उसको यहां टिकने नहीं दिया गया। महात्मा बुद्ध के धर्म तक को यहां से विदा लेनी पड़ी।

सबसे दुर्भाग्यपूर्ण बात तो यह रही कि हमारे आदर्श दूसरे देशों के आदर्शों की तुलना में चारित्रिक विसंगतियों के अधिक शिकार रहे। राम ने एक शूद्र शबरी को गले लगाया तो दूसरे शूद्र (शंबूक) का वध कर दिया। एक तरफ अपनी पत्नी को पवित्र भी माना तो दूसरी ओर उसकी अग्निपरीक्षा लेकर भी उसे गर्भावस्था में वनवास दिया।

काम का मर्दन करने वाले शिव विष्णु के मोहिनी रूप के पीछे कामासक्त होकर पागल की तरह ऐसे भागे कि मार्ग में ही उनका वीर्य स्खलित हो गया। विष्णु ने जालंधर को मारने के बहाने उसकी सतीसाध्वी पत्नी के साथ छल करके कुकर्म किया। ब्रह्माजी की नीयत अपनी लड़की सरस्वती के प्रति भी साफ नहीं थी। श्री कृष्ण की रासलीलाओं ने हिंदूधर्म का जो नुकसान किया वह सर्वविदित है ही।

यही हाल हमारे अन्य देवीदेवताओं व ऋषिमुनियों का रहा। इंद्र ने अपनी गुरूपत्नी अहिल्या के साथ, चंद्र ने देवगुरू बृहस्पति की पत्नी तारा के साथ, सूर्य ने कुमारी कुंती के साथ, पराशर ने धीवर कन्या सरस्वती के साथ, विश्वामित्र ने मेनका के साथ, भारद्वाज ने घृताची के साथ तथा वशिष्ठ ने यक्षमाला के साथ जो अपने अनैतिक व्यवहार का प्रदर्शन किया वह किसी भी स्थिति में गर्व करने की बात नहीं हैं।

स्त्रियों में यद्यपि सीता और सावित्री को आदर्श माना गया है और हिंदू शास्त्रों में जिन पंचकन्याओं की महिमा गाने व स्मरण करने का विधान है वे हैं अहल्या, मंदोदरी, तारा, कुंती व द्रौपदी। संयोग से ये सभी एक से अधिक पति वाली थीं। समझ में नहीं आता कि हिंदू धर्म में आदर्शों का ऐसा स्वरूप क्यों रहा। अगर ये ऐतिहासिक थे तो हमने चारित्रिक विसंगतियों वाले आदर्श क्यों चुने? और अगर पौराणिक थे तो ऐसे विकृत चरित्रों की कल्पना क्यों की और उनको समाज पर क्यों थोपा? ऐसे आदर्शों का समाज पर क्या प्रभाव पड़ सकता था यह कहने की आवश्यकता नहीं।

ये ही चारित्रिक विसंगतियां हमें विरासत में ज्यों की त्यों मिलीं। जब तक हम आध्यात्मिक व धार्मिक उपलब्धि में रहे तब तक हम आचरण से हीन रहे और जब हमने संकुचित ढंग से अपना आचरण संभाला तो थोथे आचरण में ही रह गए और ज्ञान को भुला बैठे। यही कारण है कि हमारे व्यक्तित्व का स्वस्थ स्वरूप बन नहीं पाया। कहीं न कहीं विकृति अवश्य रही। महान समझे जाने वाले ज्ञानी, विश्वविद्यालय के प्रोफेसर, नेता, समाज सुधारक व शासक सभी में कम अधिक ऐसी चारित्रिक विसंगतियां इस देश में मिल जाएंगी जो अन्य देशों में उस अनुपात में नहीं मिल सकतीं।

और सबसे उपहास्यास्पद बात तो यह रही कि अगर हम अपने आदर्शों के जीवन का अनुसरण करने लगें तो यही समाज हमारे पीछे लट्ठ लेकर पड़ जाएगा। अगर हम श्री कृष्ण की तरह पराई विवाहित स्त्रियों से प्रेम बढ़ाने लग जाएं, राम की तरह लोकापवाद के भय से स्त्री को जंगल में छोड़ आएं, युधिष्ठिर की तरह जुआ खेलने व मतलब के वक्त झूठ बोलने लग जाएं और अपनी पत्नी को जुए पर दांव में लगा दें या हमारी स्त्रियां कुंती व द्रौपदी की तरह कई पति रखने लगें तो समाज हमें धिक्कारने लगेगा।

इसी प्रकार जब धर्म की स्थापना करने के उद्देश्य से आए राम और कृष्ण अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए हर प्रकार के अनैतिक कार्य करते हैं–जैसे छिप कर बालि का वध या महाभारत में कौरवों के नेताओं की छलकपट से हत्या तो उसका हमारे दैनिक व्यवहार में क्या असर पड़ता है? क्या इससे हमें जिस तरह भी हो, सही या गलत अपना लाभ प्राप्त करने की प्रेरणा नहीं मिलती? क्या राम ने देशद्रोही विभीषण की सृष्टि नहीं की? क्या कृष्ण की कूटनीति से प्रेरित आज हर व्यक्ति अपने बंधुबांधवों के विरूद्ध हर प्रकार का धोखा, छल व कपट करने के लिए तैयार नहीं है।

कहा यह जाता है कि इन आदर्शों से हमें अच्छी–अच्छी बातें ही ग्रहण करनी हैं, बुरी नहीं। पर मुश्किल तो यह है कि उनकी अच्छी बातें जो कुछ भी हैं वे सब शास्त्रों की सामग्री हैं जिस से साधारण जनसमुदाय परिचित नहीं। वह तो जो कुछ सीखता है आचरण से सीखता है। और अगर अच्छी बातें ग्रहण करने व बुरी बातें छोड़ने की क्षमता समाज में है तो फिर सिनेमा देखना ही क्या बुरा है? उसमें खराब बातों के साथ–साथ कुछ न कुछ अच्छी बातें भी होती हैं।

पर हम हैं कि इस ओर ध्यान नहीं देते। पीढ़ी दर पीढ़ी हमारी संतानें ये घिसेपिटे आदर्श पढ़ती आ रही हैं और वैसे ही अबौद्धिक तथा असामाजिक संस्कार अपने में विकसित करती आ रहीं हैं।

अतः समय आ गया है कि हम इस 20वीं सदी के लोकतांत्रिक समाज की आवश्यकताओं के अनुकूल आदर्शों का चयन करें और आने वाली पीढ़ी को यह ही पढ़ाएं। जब तक हम सही आदर्श समाज में स्थापित नहीं करेंगे, तब तक हमारे प्रयासों से हमें सफलता नहीं मिलेगी।

साभार :
कितने खरे हमारे आदर्श
पृ.सं. 16 से 19 तक।
सं. राकेश नाथ

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

धर्म परिवर्तन करने वाले की स्थिति

I. गांधी और ईसाई धर्म के प्रति उनका प्रतिरोध,
II. ईसाई धर्म और समाज–सेवा,
III. ईसाई धर्म और गैर–ईसाई धर्म,
IV. ईसाई धर्म और धर्म–परिवर्तन करने वालों की भावना, और
V. ईसाई संप्रदाय और उसकी सामाजिक स्थिति।

I

सन् 1928 में इंटरनेशनल फेलोशिप की बैठक हुई। इस संस्था का उद्देश्य है कि विभिन्न धर्मों के लोगों के बीच भाईचारे की भावना बढ़ाई जाए। इस बैठक में जहां ईसाई मिशनरियों ने भाग लिया, वहां हिंदुओं और मुसलमानों ने भी भाग लिया। श्री गांधी भी मौजूद थे। इस बैठक में यह सवाल उठाया गया कि यह भाईचारा अपने आदर्श की कसौटी पर कहां तक खरा उतर सकता है, यदि आदर्श का पालन करने वाले लोग दूसरों का धर्म बदल कर उन्हें अपने धर्म में शामिल करना चाहें। बहस में श्री गांधी ने भी भाग लिया। उनके दोस्त श्री सी.एफ. एंड्रयूज ने चर्चा के बारे में इस प्रकार लिखा है :

इस सवाल के पीछे भारत में ईसाई मिशनरी की स्थिति को निश्चित चुनौती थी। उदारमना मिशनरी फेलोशिप में अति आनंद का अनुभव कर रहे थे।... फिर महात्मा गांधी ने घोषणा की। उन्होंने कहा कि ऐसा करते समय या फेलोशिप का सदस्य बनते समय यदि मन के किसी कोने में तनिक भी यह कामना या विचार हो कि फेलोशिप के किसी अन्य सदस्य पर प्रभाव डाला जाए या उसका धर्म–परिवर्तन किया जाए, तो आंदोलन की भावना मिट्टी में मिल सकती है। यदि किसी के मन में ऐसी कामना हो, तो उसे फेलोशिप से अलग हो जाना चाहिए।

ईसाई मिशनरियों ने चर्चा को आगे बढ़ाते हुए जब पूछा, 'यदि उनके पास दुनिया का सबसे बड़ा खजाना हो तो क्या उसे बांटने की कामना भी गलत होगी, तो श्री गांधी ने तुरंत उसका दो–टूक जवाब दे दिया। श्री एंड्रूज कहते हैं, 'गांधीजी अडिग रहे।' उन्होंने दृढ़ता से कहा, 'ऐसी कामना का विचार भी गलत है और मैं इस दृष्टिकोण पर अडिग रहूंगा।'

ईसाइयों द्वारा धर्म–परिवर्तन के प्रति श्री गांधी का विरोध अब तो जग को जाहिर हो गया है। 1936 के बाद से तो वह मिशनरियों के हर प्रकार के प्रचार के कट्टर विरोधी हो गए हैं। उनकी खास आपत्ति यह है कि मिशनरी ईसाई धर्म का प्रचार अस्पृश्यों के बीच कर रहे हैं। ईसाई मिशनों तथा ईसाई धर्म में अस्पृश्यों को शामिल किए जाने का उनका विरोध कतिपय प्रस्थापनाओं पर आधारित है। उनका प्रतिपादन उन्होंने बड़े ही बेबाक शब्दों में किया है। मेरे विचार में सार रूप में उनके दृष्टिकोण को प्रस्तुत करने के लिए निम्न चार प्रस्थापनाएं पर्याप्त होंगी। वह कहते हैं :

I. मेरा दृष्टिकोण है कि सभी धर्म मूलतः समान हैं। सभी धर्मों के प्रति हमारी सहज श्रद्धा धर्म जैसी ही होनी चाहिए। ध्यान रहे, आपसी सहिष्णुता नहीं, अपितु बराबर की श्रद्धा।

II. (मिशनरियों) मैं बस केवल यही अपेक्षा करता हूं कि वे सच्चे ईसाइयों जैसा जीवन जिएं, न कि उसकी टीका करें। आपका जीवन हमें संदेश दे। अंधे लोग गुलाब को तो नहीं देख पाते, पर उसकी गंध को अनुभव करते हैं। गुलाब के सिद्धांत का यही रहस्य है, लेकिन यीशु का सिद्धांत तो गुलाब के सिद्धांत से भी अधिक सूक्ष्म और सुगंधमय है। यदि गुलाब के लिए किसी एजेंट की जरूरत नहीं, तो मसीहा के सिद्धांत के लिए एजेंट की कैसी जरूरत।

ईसाई मिशनों के कार्य के बारे में वह कहते हैं :

III. मिशनरी सामाजिक कार्य को निष्काम भाव से नहीं करते, अपितु वह तो सामाजिक सेवा प्राप्त करने वालों के उद्धार का एक साधन है। .... जब आप चिकित्सा–सहायता करते हैं तो आप पुरस्कार के रूप में चाहते हैं कि आपके मरीज ईसाई बन जाएं।

अस्पृश्यों के बारे में वह कहते हैं :

IV. निश्चय ही मेरा विचार है.... कि हरिजनों का तथा भारतीयों का विशाल जनसमूह ईसाई धर्म के प्रस्तुतीकरण को नहीं समझ सकता और सामान्यतः धर्म–परिवर्तन, जहां भी वह किया गया है, आध्यात्मिकता की किसी भी दृष्टि से आध्यात्मिक कार्य नहीं रहा है। वे तो सुविधा के लालच पर किए गए धर्म–परिवर्तन हैं। जहां तक... सापेक्ष गुण–दोषों के बीच भेद करने की बात है, उनकी (हरिजनों) स्थिति गाय से बेहतर नहीं है। हरिजनों के पास न दिमाग है, न बुद्धि है और न ईश्वर और अनीश्वर के अंतर को समझने की योग्यता है।

ईसाई मिशनों को क्या करना उचित होगा, उसके बारे में श्री गांधी सलाह देते हैं, पर उनकी भाषा कुछ अप्रिय है। वह कहते हैं :

यदि ईसाई मिशन ईमानदारी से काम करेंगे.... तो उन्हें हरिजनों के धर्म–परिवर्तन की भद्दी होड़ छोड़नी होगी।....

.....भूल जाइए कि आप गैर–ईसाइयों के देश में आए हैं और सोचिए कि आपकी भांति वे भी प्रभु की खोज में हैं, जरा अनुभव कीजिए कि आप वहां उन्हें अपनी आध्यात्मिक संपदा देने नहीं जा रहे हैं, बल्कि आप वहां भौतिक संपदा देंगे, जिसका आपके पास काफी भंडार है। फिर आप बिना किसी मानसिक संकोच के कार्य करेंगे और उसके द्वारा आप अपना आध्यात्मिक खजाना देंगे। मुझे जानकारी है कि आप मानसिक संकोच से ग्रस्त हैं, यानी आप सेवा के बदले किसी व्यक्ति से धर्म–परिवर्तन की आशा करते हैं, वह मेरे और आपके बीच खाई पैदा करती है।

भारत का इतिहास ही भिन्न प्रकार से लिखा जाता, यदि ईसाई भारत में हमारे बीच भाइयों की भांति रहने के लिए आते और यदि कोई सुरभि है तो उसे हमारी सुरभि में व्याप्त कर देते।

ईसाई मिशनों तथा उनके कार्य के प्रति श्री गांधी का यह विरोध काफी हाल का है। जहां तक मुझे जानकारी है, वह येवला निर्णय से परे का नहीं हो सकता।

वह हाल का भी है और विचित्र भी। मेरी जानकारी है कि इस्लाम में अस्पृश्यों को शामिल किए जाने के प्रति इतनी स्पष्ट और दृढ़ रीति से विरोध की कोई घोषणा उन्होंने नहीं की है। अस्पृश्यों को अपने धर्म में शामिल करने की अपनी योजना को मुसलमानों ने गोपनीय नहीं रखा है। जब 1923 में कोकोनाडा में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन हुआ था तो उसकी अध्यक्षता करते हुए मौलाना मोहम्मद अली ने कांग्रेस के मंच से खुलेआम इस योजना की घोषणा की थी। अपने अध्यक्षीय भाषण में मौलाना ने साफ–साफ कहा था:

(हिंदुओं और मुसलमानो के बीच) आलमों और पीपल के पेड़ों और गाजे–बाजे के साथ जुलूसों के बारे में झगड़े वास्तव में बचकाना बातें हैं। लेकिन एक प्रश्न है, जिसे अमैत्रीपूर्ण कार्य की शिकायत के लिए सहज ही आधार बनाया जा सकता है, यदि सांप्रदायिक गतिविधियों का शांति के साथ समन्वय नहीं किया जाता। यह सवाल है दलित वर्गों के धर्म–परिवर्तन का, यदि हिन्दू समाज उन्हें तेजी से आत्मसात नहीं करता। ईसाई मिशनरी पहले ही जुड़े हुए हैं और कोई भी उनसे लड़ाई–झगड़ा नहीं करता। लेकिन जैसे ही कोई मुस्लिम मिशनरी सोसाइटी उस प्रयोजन के लिए बनाई जाती है, वैसे ही हिंदू प्रेस में चीखने–चिल्लाने की पूरी गुंजाइश पैदा हो जाती है। एक प्रभावशाली तथा धनवान सज्जन ने मुझे सुझाव दिया है कि वह दलित वर्गों के धर्म–परिवर्तन के लिए बड़े पैमाने पर (मुस्लिम) मिशनरी सोसाइटी का गठन कर सकते हैं। उनका कहना है कि यह संभव होना चाहिए कि प्रमुख हिंदू महानुभावों के साथ समझौता हो जाए और देश को दो अलग–अलग क्षेत्रों में बांट दिया जाए, जहां हिंदू और मुलसमान मिशनरी अपने–अपने इलाकों में काम कर सकें। हर संप्रदाय हर वर्ष या उससे अधिक अवधि के लिए, यदि आवश्यक हो, आकलन तैयार करे कि वह कितनी संख्या में लोगों को आत्मसात या धर्म में शामिल करने के लिए तैयार है। निश्चय ही इन आंकड़ों का आधार यह होगा कि प्रत्येक के पास कितने कार्यकर्ता और कितनी पूंजी है, और उसे पिछली अवधि के वास्तविक आंकड़ों के आधार पर परखा जाएगा। इस प्रकार हर संप्रदाय को छूट होगी कि वह आत्मसातकरण और धर्म–परिवर्तन या या सुधार का कार्य कर सके और अपनी टकराव की भी गुंजाइश न रहे।

इससे अधिक स्पष्टवादिता और क्या हो सकती है। कांग्रेस के मंच से इस घोषणा से अधिक व्यावहारिक और दुनियादारी की बात और क्या हो सकती है। लेकिन मुझे पता नहीं है कि श्री गांधी ने कभी उसकी आलोचना उस प्रकार से की है, जिस प्रकार अस्पृश्यों के धर्म–परिवर्तन के लिए ईसाई मिशनों के प्रयास की निंदा वह अब कर रहे हैं। श्री गांधी के शिविर से किसी ने भी इस अमर्यादित मुस्लिम सुझाव का प्रतिरोध नहीं किया है। शायद वे ऐसा कर भी नहीं सकते, क्योंकि कांग्रेसी हिंदुओं का विचार है कि मुसलमान जिस बात को अपना मजहबी फर्ज मानें, उसे पूरा करने में मुसलमानों की मदद करना उनका कर्तव्य है। उनका विचार है कि धर्म–परिवर्तन मुसलमानों का मजहबी फर्ज है और उससे इंकार नहीं किया जा सकता। जो भी हो, जैसा कि 1920 में जार्ज जोसेफ ने कहा था, उसके अनुसार कांग्रेस के हिंदू नेताओं का विचार था, हिंदुओं का यह धार्मिक कर्तव्य है कि वे जजीरूत–अल–अरब में अरबों पर तुर्की की खिलाफत को बरकरार रखने में मुसलमानों की सहयाता करें, क्योंकि मुस्लिम धर्म–विज्ञानियों तथा राजनेताओं ने हमें आश्वासन दिलाया है कि यह उनका मजहबी फर्ज है। यह अस्वाभाविक बात थी, क्योंकि इसका अर्थ था अरबों पर विदेशी हुकूमत को बनाए रखना, लेकिन हिंदुओं को इसे अपने गले से नीचे उतारना पड़ा, क्योंकि उनसे यह आग्रह किया गया कि वह हिंदुओं के धार्मिक कर्तव्य का हिस्सा है। यदि यह सच है तो धर्म–परिवर्तन के अभियान में गांधी ईसाइयों की मदद क्यों नहीं करते, क्योंकि धर्म–परिवर्तन भी उनके धार्मिक कर्तव्य की पूर्ति है।

अतः यह समझ में नहीं आता कि आज इस कारण अलग मापदंड क्यों अपनाया जा रहा है कि ईसाई उनमें जुटे हुए हैं। अतः श्री जार्ज जोसेफ ने सीमा का उल्लंघन नहीं किया, जब उन्होंने कहा :

एकमात्र अंतर यह है कि मुस्लिमों की संख्या साढ़े सात करोड़ और ईसाइयों की केवल 60 लाख है। मुस्लिमों से दोस्ती करना लाभकारी हो सकता है, क्योंकि वे राष्ट्रवाद के मार्ग का कांटा बन सकते हैं। ईसाइयों का कोई महत्व नहीं है, क्योंकि वे अल्प संख्या में हैं।

श्री गांधी मुसलमान तथा ईसाइयों की सापेक्ष संख्या और भारतीय राजनीति में उनके सापेक्ष महत्व जैसी बातों को प्रभावित होते हैं, यह बात उस शब्दावलि से स्पष्ट हो जाती है, जिसे वह उस निंदा के लिए इस्तेमाल करते हैं, जिसे वह प्रचार की निंदात्मक शैली कहते हैं। जब ऐसा प्रचार ईसाई मिशनरियों की ओर से होता है तो वह उनकी निंदा के लिए निम्न भाषा का प्रयोग करते हैं। (मूल अंग्रेजी की पांडुलिपि में उद्धरण नहीं है–संपादक)

दूसरी ओर जब वह मुस्लिमों की ओर से होने वाले प्रचार का विरोध करते हैं, तो वह केवल इतना कहते हैं :

कैसे खेद की बात है कि मिशन में लोगों को लुभाने के लिए धर्म को भद्दे भौतिकवाद के घटिया स्तर पर पटक दिया जाता है, जिसके पैरों तले करोड़ों मानव–प्राणियों की चिरपोषित भावनाओं को रौंदा जाता है।

मुझे आशा है कि पर्चे को मननशील मुसलमानों का समर्थन प्राप्त नहीं हैं। उन्हें इसे पढ़कर यह अनुभव कर लेना चाहिए कि ऐसे पर्चे कितना उत्पात पैदा कर सकते हैं।

मेरे संवाददाता ने मुझसे पूछा है कि उपद्रव का कैसे सामना करना चाहिए। एक उपचार का प्रयोग मैंने किया है, यानी इसके निंदात्मक प्रचार को जिम्मेदार मुस्लिम जगत के ध्यान में लाया जाए। वह स्वयं प्रकाशन के प्रति स्थानीय मुसलमान नेताओं का ध्यान आकर्षित कर सकते हैं। दूसरा तथा सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य आंतरिक शुद्धि का है। जब तक हिंदू समाज में अस्पृश्यता की स्थिति बनी रहती है, उस पर बाहर से हमले होने की संभावना बनी रहेगी। ऐसे हमलों को वह तभी रोक सकेगा, जब

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

अस्पृश्यता के पूर्ण उन्मूलन के रूप में शुद्धि की एक ठोस तथा अभेद्य दीवार खड़ी कर दी जाए।

पहले विरोध की उग्रता तथा दूसरे की विनम्रता काफी स्पष्ट है। निश्चय ही गांधी को एक चालाक 'पक्षपाती' मानना पड़ेगा।

लेकिन मुस्लिम तथा ईसाई प्रचार के प्रति उनके दृष्टिकोण में इस भेदभाव के अलावा ईसाई मिशनों के विरूद्ध श्री गांधी के तर्कों में क्या कोई वैधता हैं? उनमें निरा चातुर्य है। उनमें कोई गहराई नहीं है। वे एक बेबस व्यक्ति के घोर निराशाभरे तर्क हैं। श्री गांधी शुरूआत ही समान सहिष्णुता और समान श्रद्धा के बीच विभेद से करते हैं। 'समान श्रद्धा' एक नई अभिव्यक्ति है। यह समझ पाना कठिन है कि उसके द्वारा वह क्या विभेद करना चाहते हैं। लेकिन नई अभिव्यक्ति महत्वपूर्ण है। पुरानी अभिव्यक्ति 'समान सहिष्णुता' गलती की गुजांइश दर्शाती है। दूसरी ओर, 'समान श्रद्धा' मानती है कि सभी धर्म समान रूप से सच्चे और समान महत्व के हैं। यदि मैंने उन्हें ठीक से परखा है तो उनका आधार–वाक्य न केवल तर्क की, बल्कि इतिहास की दृष्टि से भी नितांत भ्रामक है। मान लीजिए कि धर्म का लक्ष्य प्रभु तक पहुंचना है, और मैं नहीं मानता कि वह लक्ष्य है और धर्म उस तक पहुंचने का मार्ग है, पर यह नहीं कहा जा सकता कि हर धर्म निश्चय ही प्रभु तक ले जाएगा। न ही यह कहा जा सकता है कि हर मार्ग, भले ही वह अंततः प्रभु तक ले जाता हो, सही मार्ग है। हो सकता है कि (सभी विद्यमान धर्म झूठे हों) और सर्वांगपूर्ण धर्म का अभी तक पता न चला हो। लेकिन तथ्य यह है कि धर्म पूर्णतः सत्य नहीं हैं। अतः एक धर्म के अनुयायियों को अधिकार हैं, वस्तुतः उनका कर्तव्य है कि वे अपने भटके मित्रों को बता दें कि उनकी दृष्टि में सत्य क्या है। अस्पृश्य की स्थिति गाय से बेहतर नहीं है, यह एक ऐसा कथन है जिसे कहने का दुस्साहस केवल कोई विवेकशून्य अथवा अंहकारी व्यक्ति ही कर सकता है। यह कोरी बकवास है। श्री गांधी यह कहने का दुस्साहस करते हैं क्योंकि वह स्वयं को ऐसा महापुरूष मानने लगे हैं कि अज्ञान जनता उनके कथनों पर आपत्ति नहीं करेगी और बेईमान बुद्धिजीवी वर्ग उनकी हर बात का समर्थन करेगा। उनके तर्क की सर्वाधिक विचित्र बात यह है कि वह ईसाई मिशनों द्वारा जुटाई जाने वाली भौतिक संपदा को ग्रहण करना चाहते हैं। वह उनकी आध्यात्मिक संपदा को ग्रहण करना चाहते हैं, पर उनकी शर्त है कि मिशनरी उन्हें बिना किसी बंधन के भौतिक संदपा ग्रहण करने का न्यौता दें। (वह प्रतिदान के खिलाफ है) यह समझ पाना कठिन है कि किस कारण श्री गांधी कहते हैं कि मिशनरियों की सेवाएं प्रलोभन हैं और धर्म–परिवर्तन सुविधा का लालच देने वाला धर्म–परिवर्तन है। क्यों इस बात पर विश्वास नहीं किया जा सकता कि मिशनरियों की ये सेवाएं दर्शाती हैं कि ईसाइयों की दृष्टि में पीड़ित मानवता की सेवा करना उनके धर्म की अनिवार्य अपेक्षा है? जिस प्रक्रिया के द्वारा किसी व्यक्ति को ईसाई धर्म की ओर आकर्षित किया जाता है, उसके प्रति क्या यह गलत दृष्टिकोण होगा? यह गलत है, ऐसा तो केवल पूर्वाग्रही ही कहेगा।

श्री गांधी के ये सभी तर्क प्रस्तुत किए जाते हैं, ताकि ईसाई मिशनरी अस्पृश्यों को ईसाई न बना सकें। कोई भी इस बात का खंडन नहीं करेगा कि श्री गांधी को अधिकार है कि वह हिंदू धर्म के हित में अस्पृश्यों की रक्षा करें। लेकिन उस अवस्था में उन्हें दो–टूक शब्दों में मिशनों से यह कह देना चाहिए था, 'अपना काम रोक दो, अब हम अस्पृश्यों की तथा अपनी रक्षा करना चाहते हैं। हमें अवसर दो।' खेद है कि उन्होंन मिशनरियों के उत्पात का सामना करने के लिए ईमानदारी का यह तरीका नहीं अपनाया। कोई कुछ भी कहे, पर निश्चय ही सभी अस्पृश्य, चाहे उन्होंने धर्म बदला हो या न बदला हो, इस बारे में सहमत होंगे कि श्री गांधी ने ईसाई मिशनों के प्रति घोर अन्याय किया है। सदियों तक ईसाई मिशनों ने उन्हें यदि शरण नहीं, आश्रय तो दिया ही है।

जरूरी नहीं कि श्री गांधी का यह रवैया भय दिखाकर मिशनरियों अथवा अस्पृश्यों को रोक सके। ईसाई धर्म भारत में अपनी जड़ें जमा चुका है। यदि उसे दबाने के लिए हिंदू राष्ट्रवाद के उन्माद में अपनी राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक शक्ति का दुरूपयोग नहीं करेंगे, तो वह जिंदा रहेगा और सदा ही उसकी संख्या और प्रभाव में वृद्धि होती रहेगी।

साभार – बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर
सम्पूर्ण वाङ्मय खंड–10, पृष्ठ सं. 385 से 391
डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

बुद्ध एक मार्गदाता, न कि मोक्षदाता

भगवान बुद्ध ने उसी मान्यता को महत्व दिया, जो बुद्धि की कसौटी पर खरा उतरती है। उन्होंने अपने सिद्धांत को सदाबहार, परिवर्तनगामी और वैज्ञानिक आधार दिया, जो मानवीय उत्थान के लिए बिल्कुल युक्तिसंगत और उपयुक्त है। अन्य धर्म प्रवर्तकों की तरह भगवान बुद्ध यह नहीं कहते कि मैं आपको मोक्ष दिला दूँगा अथवा दुखों से छुटकारा दिला दूँगा। बुद्ध यह कहते हैं कि मैं तुम्हें दुखों से छुटकारा पाने का मार्ग बतलाऊँगा। ईसामसीह कहते हैं कि मैं परमेश्वर का पुत्र हूँ। जो कोई भी परमेश्वर का प्रेम पाना चाहता है, उसे मुझे परमेश्वर पुत्र के रूप में मान्यता देनी होगी। मेरे ही माध्यम से वह ईश्वर के राज्य में सुखी रह सकता है। उनका वचन है–''हे दुखी एवं भयाक्रांत लोगों, तुम सब मेरे पास आओ, तो मैं तुम्हें विश्राम दिलाऊँगा।'' हजरत मोहम्मद इस्लाम धर्म के प्रवर्तक थे। वे कहते हैं कि वे खुदा के दूत हैं और अंतिम दूत हैं। जो कोई मुक्ति चाहता है, उसे पैगंबर के रूप में उनकी स्वीकृति आश्वयक है। गीता के कृष्ण तो जीसस और पैगंबर से भी दो कदम आगे बढ़कर कहते हैं मैं ही ईश्वर हूँ, मैं ही देवाधिदेव हूँ, मैं सबों में श्रेष्ठ हूँ, जो कोई भी मेरी शरण में आता है, उसे मोक्ष दिला दूँगा। अतः हे अर्जुन–

सर्व धर्मान्परित्यज्यं मामेकं शरणं वज्र।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।
गीता–18 / 66

अर्थात् ''सभी धर्मों का परित्याग का तुम मुझ अकेले की शरण में आ जाओ। मैं तुम्हें सब पापों से मुक्त कर दूँगा। तुम शोक मत करो।'' वास्तव में यह प्रवृत्ति सामंतों जैसी है, जो किसी पर मानसिक दबाव डालकर, किसी मत को मानने हेतु मजबूर करता है अथवा उस पर जबरन अपने मत को थोपता है।

परंतु बुद्ध कहते हैं – ''तुम बुद्ध, धम्म और संघ का आश्रय लेकर अपने परिश्रम से अपने तथा औरों के दुःख का नाश करो, दुनिया का दुःख कम करो।'' बुद्ध की धर्म–प्रवर्तक के रूप में यह सबसे बड़ी विशेषता और महानता है। भगवान बुद्ध ने कभी न तो किसी पर अपनी बात मनवाने हेतु दबाव डाला अथवा किसी उपाधि पाने की इच्छा व्यक्त की, और न ही अपने को अतिप्राकृतिक शक्ति अथवा चमत्कारिक शक्ति से परिपूर्ण महामानव माना। बुद्ध ने स्पष्टतः कहा– ''मैं मार्गदाता हूँ, न कि मोक्षदाता'' जबकि जीसस, मोहम्मद और कृष्ण ने स्वयं का मोक्षदाता के रूप में दावा किया है। धर्म–प्रवर्तक के रूप में भगवान बुद्ध की एक और विशेषता है, जो उनको अन्य धर्म प्रवर्तकों से अलग रूप में स्थापित करती है। वह है – अपनी मान्यता पर पुनर्विचार। भगवान् बुद्ध का शुरू में मानना था कि स्त्रियों को भिक्षुसंघ में प्रवेश नहीं दिया जाए, परंतु आनंद के युक्तिपूर्ण तर्क से उन्होंने भिक्षुसंघ के द्वार स्त्रियों के लिए भी खोल दिए। ऐसी मिसाल किसी भी धर्म प्रवर्तक ने प्रस्तुत नहीं की है। भगवान् बुद्ध के अलावा दूसरे अपनी हर बात और इच्छा को ही धर्म–सूत्र के रूप में स्थापित करते हुए दिखते हैं।

भगवान् बुद्ध परिवर्तनशीलता के सिद्धांत में विश्वास करते हैं। यही बुद्ध की अनोखी विशेषता है। वह यह नहीं मानते कि उनकी बात और सिद्धांत अटल हैं, शाश्वत् हैं। वे कहते है– हर कुछ बदलता है। ''सर्वश् अनित्यम'' – कि – सभी नाशवान् है, नित्य (शाश्वत्) कुछ भी नहीं हैं। इसीलिए वे 'महापरिनिब्बानसुत्त' में आनंद से कहते हैं कि समय के साथ यदि मेरी स्थापना, अनुकूल न लगे तो इसे परिवर्तित कर देना अथवा बदल देना। ऐसी छूट और किसी धर्म प्रवर्तक ने नहीं दी। भगवान बुद्ध ऐसी छूट देकर अपने धर्म को सदाबहार और जीवित रखना चाहते थे तथा उसे आधुनिकतम बनाए रखना चाहते थे। इस प्रकार बुद्ध ने अपने कार्य को सदैव जीवंत और देशकाल व परिस्थिति के अनुसार सर्वग्राही बनाए रखा। उन्होंने अपने अनुयायियों से स्वयं के वचन को भी जाँच–परखकर अमल में लाने की बात कही है। कलामसूत में भगवान बुद्ध कहते हैं कि ''किसी बात में विश्वास इसलिए मत करो कि वह पुराने समय से चली आ रही है, किसी बात को इसलिए भी स्वीकार मत करो कि इसे अधिक संख्या में लोग मानते हैं, किसी बात को इसलिए भी स्वीकार मत करो कि वह किसी धर्मग्रंथ में लिखी है, किसी बात को इसलिए भी स्वीकार मत करो कि वह असाधारण प्रतीत हो रही है अथवा किसी महापुरूष की कही हुई, बल्कि किसी बात को इसलिए स्वीकार करो कि वह बुद्धि की कसौटी पर परख ली गई है तथा व्यक्ति और समाज के लिए हितकर और सुखकर है।'' इस प्रकार व्यक्ति स्वयं ही अपना गुरू है (अप्त दीपो भव) तथा मार्ग पर चलकर उसे ही मंजिल हासिल करनी है। सिद्धांत का अनुसरण कर क्रियान्वयन उसे ही करना है, नए विचारों की खोज उसे ही करनी है, अतः उसे स्वयं में प्रकाशित होना चाहिए। आज जगत् में सर्वत्र लूटमार, भ्रष्टाचार और अनैतिक व्यापार का बोलबाला है। ऐसे में भगवान बुद्ध का 'पंचशील' हमें सद्मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए रोशनी का काम करता है। जिसने बुद्ध के मार्ग का अवलंबन किया है, वह आगे बढ़ा है, सुखी हुआ है। जापान ने बुद्ध को अपनाया तो वह बुद्धिवादी देश बन गया। जापान विकसित देश है और इलेक्ट्रोनिक उपकरणों के मामले में उसका कोई सानी नहीं है। वैयक्तिक जीवन में एक बौद्ध रूढ़िवादी परंपराओं, अंधविश्वासों तथा अनावश्यक कर्मकाण्डों से मुक्त होकर सुखी जीवन जीता है। वह शुभ–अशुभ के विचारों से परे होकर प्रकृति के अटल नियमों को स्वीकार का निर्भय जीवनयापन करता है। एक बौद्धिस्ट सदैव आधुनिकता और नवीनता के वातावरण में जीता है तथा उसका जीवन निर्मल, निर्झर के नीर की तरह हमेशा प्रवाहमान रहता है। अतः बुद्ध के विचार और दर्शन आज समय की माँग है। कोई भी गर्व से कह सकता है कि वह बौद्धिस्ट है, इसलिए कि वह बुद्धिवादी है, मानववादी है।

भिक्षुसंघ और भिक्षु

भगवान् बुद्ध ने बौद्ध धर्म के सिद्धांतों का आम आदमी के बीच प्रचार–प्रसार करने के उद्देश्य से भिक्षुसंघ की स्थापना की थी। भिक्षुसंघ द्वारा आम आदमी यह जान सकता था कि बौद्ध धर्म के सिद्धांत क्या है? भगवान बुद्ध ने न केवल भिक्षुसंघ की स्थापना की, बल्कि उसे विनय के नियमों से बाँधा भी, ताकि संघ की पवित्रता बनी रहे। एक भिक्षु स्वतंत्र और बंधनमुक्त होकर लोगों को देशना दे सके तथा जनकल्याण कर सके, इसी को ध्यान में रखकर बुद्ध ने भिक्षुओ के लिए निजी–संपत्ति और विवाह वर्जित किया था। परंतु आज अधिकांश भिक्षु अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन ठीक–ठीक नहीं कर रहे हैं, ऐसा मानना था बाबासाहब का। भिक्षु आमजन का न तो मार्गदर्शन कर रहे हैं और न ही उनकी सेवा में संलग्न हैं। बुद्धिज्म के प्रचार से आज का भिक्षु विरत है, बाबासाहब ऐसा समझते थे।

आज का भिक्षु महज हिंदू साधु के रूप में जीवन व्यतीत कर रहा है। उसका अधिकांश समय ध्यान और आलस में व्यतीत हो रहा है। वह बौद्ध–विहारों में खाकर पड़े रहने वाला प्राणीमात्र है, भिक्षु नहीं। उसमें न तो कुछ सीखने की प्रवृत्ति है और न ही धम्म–देशना करने का उत्साह और त्याग। बाबासाहब कहते थे– ''बहुत सारे खाकर पड़े रहने वाले आलसी भिक्षुओं की अपेक्षा कम ही भिक्षु चाहिएँ, परंतु वह उच्च शिक्षा प्राप्त हों, कला, विज्ञान और दर्शन में पारंगत हों। भिक्षुसंघ में जीसस को मानने वाले क्रिश्चियन पादरी का गुण होना चाहिए। संपूर्ण एशिया महाद्वीप में क्रिश्चिनिटी सिर्फ शिक्षा और स्वास्थ्य–सेवा के जरिए फैली है। प्राचीन समय में भिक्षुओं के लिए जनसेवा आदर्श होता था। नालंदा और तक्षशिला जैसे विश्व–प्रसिद्ध विश्वविद्यालय भिक्षुओं द्वारा ही चलाए जाते थे। आज के भिक्षु को पुराने संघ की ओर अनिवार्य रूप से लौटना होगा।'' परमपूज्य बाबासाहब भगवान बुद्ध की उस मुद्रा वाली मुर्ति को पसंद करते थे, जिसमें उनकों हाथ में भिक्षापात्र लेकर चारिका करते हुए दिखाया गया है। यह मूर्ति भिक्षुओं को हमेशा चारिका करते हुए धम्म–देशना करने की प्रेरणा देती है, लोककल्याण निमित्त अकेले चलते रहने की शिक्षा देती है तथा सतत् जागृतशील रहने का स्मरण दिलाती है। आज के भिक्षुओं को पुराने भिक्षुसंघ के पदचिन्हों पर लौटने की जरूरत है। बौद्ध धर्म को प्रसारित करने के लिए एक ''मिशन बुद्धिज्म'' की आवश्यकता है, जो धन और व्यक्ति (Money & Man) के बिना संभव नहीं है।

साभार – अशोक विजयादशमी का
ब्राह्मणीकरण पृष्ठ सं. 47 से 50
डॉ. विजय कुमार त्रिशरण

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

सेवा में,
नाम ....
पता ....
....
....

वैदिक धर्म तथा सामाजिक व्यवस्था का विरोध

इन सिद्धांतों को ध्यान में रखने पर यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि महावीर तथा बुद्ध के सामने जितनी बड़ी समस्या वैदिक धर्म की कुरीतियों पर प्रहार करने की थी उतनी ही इन अतिवादी सिद्धांतों पर आधारित उपदेशों का विरोध करने का भी थी। वैदिक धर्म की जीर्ण परंपराओं तथा विभिन्न परिव्राजकों के अव्यवस्था–मूलक उपदेशों के बीच समाज को एक समाधान की आवश्यकता थी।

जैन धर्म ने वेद की प्रामणिकता नहीं मानी और वेदवाद का विरोध किया। इसी प्रकार यज्ञ–कर्मकांड के लिए भी जैन धर्म में कोई स्थान नहीं था। ब्राह्मण धर्म की जाति–प्रथा की भी आलोचना की गई। जैन धर्म के सप्तभंगी सिद्धांत के अनुसार वेदवाक्य सर्वमान्य प्रमाण नहीं हो सकता था। घोर अहिंसावादी होने के कारण पशु–वध के विधान वाले यज्ञ का भी विरोध करना जैन धर्म के लिए स्वाभाविक ही था। जैन धर्म में निर्वाण का द्वार सभी जाति तथा वर्गों के लिए खुला था। सामाजिक धरातल पर ब्राह्मणों की अपेक्षा क्षत्रियों की अधिक प्रतिष्ठा पर जैन ग्रंथों में बल दिया गया है। पार्श्वनाथ के समान ही महावीर स्वामी ने भी ब्राह्मण धर्म के यज्ञ–विधान तथा कर्मकांड पर प्रहार किया। यज्ञ में जीवों का विनाश पाप उत्पन्न करता है। अग्नि प्रज्वलन तथा जल–मज्जन केवल बाहरी शुद्धता प्रदान कर सकता है। जन्म से निर्धारित वर्ण–प्रथा को अस्वीकार कर इन्होंने कर्म को ही वर्ण तथा जाति का आधार माना है। कर्म से ही कोई ब्राह्मण होता है और कर्म से ही व्यक्ति क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र होता है। नैतिक आचरण को आधार मानकर महावीर स्वामी ने कहा, 'जो अग्नि में तपाकर शुद्ध किए और घिसे गए सोने की भांति पाप–मल से रहित है और जो राग–द्वेष और भय से मुक्त है, उसे हम ब्राह्मण कहते हैं।''

किंतु जैन धर्म ने शीघ्र ही वैदिक परंपरा से गुह्य संस्कारों तथा अन्य सामाजिक सिद्धांतों में समन्वय स्थापित कर लिया। इससे ने केवल जैन धर्म का प्रचार–प्रसार ही सरल हुआ वरन् कालक्रम में जैन धर्म हिंदू धर्म की एक शाखा ही हो गया।

वैदिक कर्मकांड का विरोध बुद्ध के पहले ही उपनिषद् के ज्ञान–मार्ग की स्थापना में स्पष्ट परिलक्षित होता है। उपनिषदों के चिंतको द्वारा वैदिक परंपरा को औपचारिक मान्यता तो दी गई है परंतु इस दर्शन का मूल स्वरूप सांसारिक जीव की निस्सारता, त्याग तथा संन्यास को ही उभारता है। वैदिक यज्ञ की अपेक्षा साधना, तप तथा उपासना की इसमें अधिक महत्त स्थापित है। जैन तथा बौद्ध में त्याग तथा संन्यासप्रधान जीवन को वैदिक यज्ञवाद के विरूद्ध स्थापित किया गया। बुद्ध ने वेदों को अकाट्य प्रमाण नहीं माना। बौद्ध धर्म में सार्वभौम ईश्वर की कल्पना थी ही नहीं और उनके अनुसार वेद देववाक्य नहीं हो सकता था। बुद्ध की दृष्टि में वेद मंत्र केवल जलविहीन मरूस्थल तथा पंथहीन जंगल था। बुद्ध ने घोषित किया कि वैदिक धर्महीन विद्या है। किसी भी तथ्य को व्यक्तिगत परीक्षण के बाद ही स्वीकार करना अपेक्षित है, परंपरागत प्रमाण के आधार पर नहीं। वेद को ईश्वरी ज्ञान न मानने का सीधा अर्थ था वैदिक कर्मकांड तथा यज्ञ को भी अस्वीकार करना। बुद्ध ने ब्राह्मणों को प्राचीन ऋषियों द्वारा रचित मंत्रों का अंधभाव से पुनरावृत्ति करने वाला कहा। पुरोहित केवल धन के लालच से यज्ञ कराने वाले कहे गए हैं। अश्वमेध तथा पुरूषमेध आदि यज्ञों से कोई लाभ नहीं होता। बौद्ध ग्रंथों में स्पष्ट कहा गया है कि लोग पशु–वध के कारण पुरोहितों की निंदा करते हैं और शूद्र, वैश्य तथा क्षत्रिय उनके मत को अस्वीकार कर रहे हैं। सुत्तनिपात में एक स्थान पर कहा गया है कि इसी कारण धनी ब्राह्मण भी गौतम (बुद्ध) धम्म तथा संघ की शरण में आ रहे हैं।

बौद्ध ग्रंथों में जन्म पर आधारित जाति प्रथा का घोर विरोध किया गया है। बुद्ध के अनुसार जन्म से कोई ब्राह्मण या अब्राह्मण नहीं होता वरन् कर्म से ही जाति का निर्धारण होता है। जिनमें पूर्ण ज्ञान तथा नैतिकता हो, वह देव तथा मनुष्य सब में श्रेष्ठ होता है। जैसे अग्नि सभी प्रकार की लकड़ियों से प्रज्वलित हो सकती है उसी प्रकार सभी जाति के लोग संन्यासी होकर निर्वाण प्राप्त कर सकते हैं। अर्हत की स्थिति प्राप्त करने पर तो व्यक्ति के लिए वर्ण व्यवस्था निस्सार हो जाती है। जैसे गंगा, यमुना, सरयू, आदि नदियां समुद्र में मिलने पर अपनी विशिष्टता खो देती है उसी प्रकार श्रवण (संन्यासी) जीवन अपनाने पर वर्णों की पहचान समाप्त हो जाती है। बुद्ध ने अपने क्रांतिकारी उद्घोष में कहा कि जीवनहत्या करने वाले अनैतिक कर्म में रत तथा बुरे आचरण वाले व्यक्ति मरने के बाद नरक के भी भागी होंगे। ब्राह्मण वर्ण इसका अपवाद नहीं है। इसी प्रकार अच्छे कर्म करने वाले सभी लोग मरणोपरांत स्वर्ग जाएंगे। यहां यह उल्लेखनीय है कि उच्च आदर्शमय जीवन व्यतीत करने तथा शुद्ध द्व ग्रंथों में निंदा की गई थी। आचरण से युक्त ब्राह्मण की बुद्ध ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। बुद्ध का प्रहार विशेष रूप से पुरोहितवर्ग पर था जो यज्ञ कराने तथा पशु वध के लिए उत्तरदायी था। यज्ञों में पुरोहितों के दक्षिणाविषयक लालच की बौद्ध ग्रंथों में निंदा की गई थी।

बौद्ध धर्म की समाजिक परिकल्पना वर्णव्यवस्था के प्रभाव से मुक्त हो, ऐसी बात नहीं थी। बौद्ध ग्रंथों में क्षत्रियों की सामाजिक प्रतिष्ठा ब्राह्मणों की अपेक्षा अधिक बताई गई है। मानवमात्र में क्षत्रियों को श्रेष्ठ कहा गया है। रक्त शुद्धता के लिए क्षत्रियों में विशेष गर्व का वर्णन दीघनिकाय के अम्बट्ठसुत्त में हैं। यहां यह उल्लेख उचित होगा कि उत्तर–पूर्वी भारत की संन्यासप्रधान श्रमण–संस्कृति के परिवेश में ब्राह्मणों को जीवन–निर्वाह के लिए वैदिक परंपरा में मान्य साधन मिलना कठिन था। सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तनों की प्रक्रिया के कारण ऐसा होना और भी स्वाभाविक था। दस ब्राह्मण जातक में वैद्य, संदेशवाहक, कर वसूलने वाले, लकड़ी काटने वाले, व्यापारी, कृषक, कसाई आदि रूपों में ब्राह्मणों का वर्ण है। फिक ने वास्तविक ब्राह्मण तथा सांस्कृतिक ब्राह्मणों के अंतर पर बल दिया है किंतु तत्कालीन परिवर्तनशील समाज में ब्राह्मण तथा क्षत्रिय दोनों अपने वैदिक परंपरागत कर्मों से गिर गए थे और हर प्रकार के पेशे अपना रहे थे। जैन तथा बौद्ध ग्रंथों में क्षत्रिय वर्ण को अधिक सम्मान देने के अनेक कारण थे। वैदिक धर्म की मान्यताएं समाज में अपनी प्रतिष्ठा खो रही थीं। इससे ब्राह्मण वर्ग के सम्मान में कमी आना अवश्यंभावी था। अनेक विद्वानों का मत है कि प्रवाहण जैवलि, अश्वपति कैकेय, राजा जनक आदि शासकों द्वारा ब्राह्मणों को दर्शन की शिक्षा देने के कारण क्षत्रिय वर्ण की अधिक प्रतिष्ठा होने लगी। क्षत्रियों की विशेष प्रतिष्ठा में यह तथ्य कुछ हद तक अवश्य रहा होगा। किंतु बड़े शासकों के अतिरिक्त सैनिक रूप में, कृषिकार्य में जनजातीय लोगों को अधिकाधिक संख्या में संलग्न करने में, राजकीय कार्यों में, कर वसूली द्वारा राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक ढांचे की सुरक्षा और विकास में नए शस्त्रधारी क्षत्रिय वर्ग की विशिष्ट भूमिका थी। नवीन धार्मिक आंदोलन द्वारा इस शक्तिशाली वर्ग को अधिक प्रतिष्ठा देना अस्वभाविक नहीं था।

साभार – प्राचीन भारत का इतिहास
पृष्ठ सं. 145 से 147
द्विजेन्द्रनारायण झा, कृष्णमोहन श्रीमाली

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।